चैतन्य लहरी

हिन्दी

मार्च-अप्रैल २०१०

इस जन्म दिन पर.....

भेजना चाहते थे आपको सुन्दर फूल
पर आपसा सुन्दर फूल हमें
इस जहाँ में नहीं मिला!

भेजना चाहते थे आपको खुशबूदार फूल
पर ऐसा कोई फूल न मिला जिसमें
आपके प्रेम की खुशबू हो!

भेजना चाहते थे आपको प्रेममयी सन्देश
पर आपसा 'प्रेम का सन्देश' हमें
इस दुनिया में न मिला!

बतलाना चाहते हैं हम,
पाकर आपको कितने हैं धन्य
पर शब्द पड़ जाते हैं कम,
खुशी के आँसू से
आँखे पड़ जाती हैं नम!

हम सब सहजी बच्चों की ओर से आपको
जन्मदिन की बधाईयाँ!!!

इस अंक में

समय की पुकार - ४

हंसा चक्र इलाज - २०

शिवरात्री पूजा - २२

अन्य......

श्री राम नवमी - १९

समय की पुकार (अनुवादित)

पुणे, २५ मार्च १९९९

तो अब समय (आत्मानन्द का) आ गया है,
क्योंकि कलयुग खत्म हो गया है।

सत्य साधकों को हमारा प्रणाम!

इसके पहले भी मैंने कई बार आपको सत्य के बारे में बताया है। सत्य क्या है? सत्य और असत्य इन दोनों में क्या अन्तर है, ये कैसे जान सकते हैं। इसके बारे में मैंने बहुत अच्छी तरह से समझाया है। सबसे पहले इस पुणे में या पुण्यपट्टणम् में हम सत्य क्यों खोज रहे हैं, यह जानना जरूरी है। आज के इस कलियुग में ऐसी-ऐसी घटनाऐं होने लगी हैं कि मनुष्य घबराने लगा है। उसकी समझ में नहीं आ रहा है कि यह क्या हो रहा है और कलियुग की यही विशेषता है कि मनुष्य संभ्रान्ति की स्थिति में घिरा हुआ है। इस स्थिति में आकर वह घबरा जाता है। उसे पता ही नहीं चलता कि सत्य क्या चीज़ है? मैं कहाँ जा रहा हूँ? दुनिया कहाँ जा रही है? इस तरह के प्रश्नों से वह घिरा रहता है। ऐसी हालत सिर्फ महाराष्ट्र में नहीं, बल्कि पूरे भारतवर्ष में, पूरी दुनिया में है। पूरी दुनिया को इस कलि की महिमा की जानकारी हो रही है।

नल और दमयंती का जो बिछड़ना हुआ था वह कलि के कारण ही था और एक बार यह कलि नल के हाथों पकड़ा गया। उसने (नल ने) कहा, 'मैं तुम्हारा सर्वनाश कर दूँगा ताकि किसी को भी तुमसे परेशानी न हो। कोई तकलीफ न हो।' तब कलि ने नल से कहा कि, 'पहले तुम मेरी महिमा सुनो। वह सुनने के बाद भी अगर तुम मुझे मारना चाहते हो तो मार सकते हो।' तब नल ने कहा कि, 'तुम्हारा क्या महत्व है? क्या महत्व है तुम्हारा?' तो कलि ने कहा, 'मेरा यह महत्व है कि जब मेरा राज आएगा याने कि जब कलयुग आएगा तब सारे लोग संभ्रान्तित अवस्था में रहेंगे। यही सत्य है। मगर इसी से उनकी इच्छा प्रबल हो जाएगी कि हम ये खोज निकालें कि यह मानवीय जीवन क्या है? हम यहाँ क्यों आये हैं? इसके आगे हमें क्या करना है? और इसी खोज में जो गिरि-कन्दरों में ईश्वर की खोज कर रहे हैं, या सत्य की खोज कर रहे हैं, परम को ढूँढ़ रहे हैं उन्हें इसका सहज ही लाभ होगा, इसका अनुभव होगा। अनुभूति होना यही सच की पहचान है। अनुभूति के सिवाय किसी चीज़ पर अपनी जान न्योछावर करना यह बात ठीक नहीं है।

जब मैंने महाराष्ट्र में कार्य आरम्भ किया तब मुझे सबने बताया कि, 'माताजी, यहाँ आपको पायली के पचास गुरु मिलेंगे।' (पायली का मतलब एक माप होता है। एक माप के आपको पचासों गुरु मिलेंगे।) मैंने कहा, 'अब क्या होगा? लोगों का क्या! हमारे ये गुरु, हमारे वो गुरु। उन गुरुओं से आपको क्या कोई लाभ हुआ है क्या? क्या उन्होंने आपको कुछ अनुभव कराया? या कोई दान दिया है? आप क्यों उनके पीछे-पीछे दौड़ रहे हो?' ऐसा कहीं लिखा नहीं है कि गुरु को खोजना ही है। खोजना तो है ही, पर जो आपके सामने आकर खड़ा हो जाये, आप उसे गुरु कैसे कह सकते हो? आजकल इन गुरुओं ने पुणे में धूम मचा रखी है, इसमें कोई सन्देह नहीं है। मेरे आने के बाद वे सारे मुझ पर बरस पड़े। इसका मुझे कोई बुरा नहीं लगा। मुझे पता था कि यहाँ पचासों गुरु हैं। आगे चलकर मेरी समझ में यह आया कि, यहाँ लोगों को बहुत ही कष्ट हैं, बहुत ही तकलीफे हैं, पीड़ाये हैं, बाधाये हैं और अनेक प्रकार की परेशानियों से पीड़ित लोग जब सत्य से परिचित होंगे तब वे सहजयोग में प्रवेश करेंगे और उसका आनन्द भी उठायेंगे। इस सागर में आने के बाद ही 'आनन्द क्या होता है' इसे समझेंगे। तब जाकर

मैंने किसी तरह धीरे-धीरे सहजयोग का प्रचार शुरू कर दिया। आज देख रही हूँ इतनी तादाद में आप लोग आये हैं, इसे देखकर मुझे खुशी हो रही है। जब मैं कल आयी तो आप सब लोग हवाईअड्डे पर (एअरपोर्ट) आये और जिस उत्साह से आपने मेरा अभिनन्दन किया, मेरी तो आँखे भर आयी क्योंकि मैंने जिन्दगी में कभी सोचा नहीं था कि मेरे कार्य को इतनी गति मिलेगी। तब यह जो हुआ आपकी मेहरबानी से हुआ। अब ये कहना चाहिए कि आप पुणे वालों की कृपा ही है और उनकी कृपा से यह घटित हुआ है।

इस कार्य में किस प्रकार के भ्रम निर्माण होते हैं यह जान लेना आवश्यक है। पहला भ्रम तो ये होता है कि पैसा ही सब कुछ है। पैसा कमाया, बस हो गया। पैसे के सामने बाकी कुछ भी नहीं। पैसा या हम कहें भौतिकवाद। ये कलि का ही अवतार है। भौतिकवाद का मतलब होता है कि पैसे के लिए चाहे जो करना। किसी का भी गला काटो, जो दिल में आये वही करो। पैसा मिला तो सब कुछ मिला। यही पैसा जो अपने सिर पर बैठा हुआ है, वह सर्व गुरुओं से भी बढ़कर है। ऐसे में पैसे के लिए कुछ भी धंधा करो। चाहे कैसा भी बर्ताव करो। इससे कोई फर्क नहीं पड़ता। लेकिन पैसा चाहिए।

इतना पैसा-पैसा कर रहें हैं, मगर मैं पुणे में आज देख रही हूँ कि एक भी फ्लैट बिक नहीं रहा है। कहते हैं कि लोगों के पास पैसा ही नहीं है फ्लैट खरीदने के लिए। तो ये सारा पैसा गया कहाँ? पैसा-पैसा करते-करते आज ये हालत हो गयी है। इससे पहले तो इतनी बुरी हालत नहीं थी। ऐसी हालत कैसे हुई, यह मैं नहीं बता सकती। मगर मैं इतना जरूर कह सकती हूँ कि पैसे से कोई सुख, समाधान और मन:शान्ति नहीं मिलती। कभी भी नहीं मिल सकती। आज अगर आपको एक नया घर बाँधने की इच्छा हुई, आपने बाँध भी लिया, मगर आपने इसका उपभोग नहीं लिया, फिर मन करेगा गाड़ी खरीदें, गाड़ी भी खरीद ली। अब आपको हवाई जहाज तक पहुँचना है। यह जो पैसे के लिए भागादौड़ी हो रही है इससे तो ये सिद्ध हो रहा है कि सुख पैसे में नहीं है। तो सुख किसमें है? सुख आत्मानन्द में है। आत्मा का जो आनन्द है वही सबसे सुखदायक है और शीतल है।

तो अब यह समय (आत्मानन्द का) आ गया है, क्योंकि कलयुग खत्म हो गया है। वह (कलयुग) खत्म हो गया है, उसकी पकड़ खत्म हो गयी। अब लोगों की समझ में यह बात आ रही है और मनुष्य अब आत्मानुभव के लिए तैयार है। इस महाराष्ट्र में अनेक गुरु और संत हो गये हैं। बहुत बड़े-बड़े लोग आये, परन्तु उनको बहुत सताया गया, किसी का भी कुछ नहीं सुना। सबको सता-सता कर तंग किया गया। उनकी जगह पर अगर कोई और होता तो कहता मुझे साधु-संत नहीं बनना। यही हालात थे, तब इतनी भी अकल लोगों में नहीं थी कि साधु किसे कहते हैं? गलत लोगों के साथ रहना, गलत लोगों के साथ सम्बन्ध रखना, उनके पीछे-पीछे भागना। जो सच्चे हैं उनके साथ अच्छे सम्बन्ध ना रखना-इस तरह का माहौल था उस वक्त। अब यह स्थिति बदल रही है।

अपने जो षड़रिपु हैं, उनका कार्य जोर से शुरू था। अब धीरे-धीरे शान्त हो रहा है क्योंकि सामने दिख रहा है कि इससे (षड़रिपु) कोई फायदा नहीं होने वाला है हमें। इससे कुछ सुख नहीं मिलेगा, आनन्द नहीं मिलेगा। पर फिर भी मनुष्य खोज रहा है कि आनन्द कहाँ है? सुख किसमें है? खोज़ते-खोज़ते उसे पता चलता है कि आत्मा का दर्शन होना जरूरी है। उसके दर्शन के बिना उसे कोई आनन्द प्राप्त नहीं होने वाला है।

मेरे कहने का मतलब ये है कि अपने यहाँ इतने साधु-सन्त हो कर गये हैं और लोग उनको सताते

ही थे। पर उन्होंने (सन्तों ने) ही बताया है कि, 'कोई बात नहीं, आप ईश्वर का नाम लेते रहो, पांडुरंग, पांडुरंग।' तो लोग चले मंजीरे बजाते हुए उधर, वारकरी बनकर। अब हुआ ये है कि, आपने बहुत मंजीरे बजाये हैं। आपने बहुत कुछ किया है, पूरे दुनियाभर के मन्दिरों का दर्शन आप करके आये हैं। क्या आप जिन्दगीभर यही करते रहोगे? इसके आगे भी एक सीढ़ी है जो कि तैयार है, तो क्यों ना हम चढ़ जाय? और इसके आगे की सीढ़ी है सहजयोग की। सहजयोग में अब तक आपने जो इच्छा की है, जो भी आपने माँगा और जो आपका लक्ष्य था वही सिद्ध करना है और कुछ नहीं करना है क्योंकि आप में शक्ति है, कुण्डलिनी शक्ति है। मगर आप तो जिद करके बैठे हो। यहाँ पर कुछ लोग आकर बैठे हैं, जिन्होंने कहा, 'हम आपको एक लाख रुपये देंगे । आप हमारी कुण्डलिनी शक्ति जागृत कीजिए।' मैंने कहा, 'आप ही दो लाख रुपये लीजिए और मुझे कुण्डलिनी जागृत करने दीजिए।' क्या कभी पैसे से कुण्डलिनी शक्ति जागृत होती है! यह तो जीवन्त कार्य है। अगर एक बीज को आपने जमीन में बो दिया और उसके सामने जाकर खड़े होकर आपने कहा, 'यह एक लाख रुपये ले लो और पेड़ का निर्माण करो।' वह पेड़ तो कहेगा, 'आप वापस जाओ। आपको अकल नहीं है। यह तो जीवन्त कार्य है।' जीवन्त कार्य का मतलब होता है; आपकी कुण्डलिनी का जागरण। यह कार्य कई बार इस महाराष्ट्र में हुआ है। मगर पुराने जमाने में ऐसी परम्परा थी कि, एक (गुरु) ने एक (शिष्य) ही को जागृति देनी है। उससे अधिक लोगों को नहीं। बहुत अच्छी तरह से उनकी (शिष्यों की) धुलाई कर करके आखिर में एक इन्सान मिलता था, जिसे जागृति दी जाती थी।

परन्तु श्री ज्ञानेश्वरजी की कृपा से बारहवीं सदी में उन्होंने अपनी ज्ञानेश्वरी में साफ-साफ लिखा है छठे अध्याय में, कि कुण्डलिनी नाम की शक्ति है। उसके पहले आपके यहाँ के लोगों को कुण्डली और कुण्डलिनी इन दोनों में क्या अन्तर है ये पता नहीं था। और यह शक्ति हम सबमें स्थित है। आपकी चाहे जो जाति हो, ब्राह्मण हो, शुद्र हो। यह जाति तो मानव ने बनाई है, वैसे तो कोई शुद्र या ब्राह्मण नहीं होता। इस विश्व में ऐसा भी कुछ है, ये मैं नहीं मानती और ऐसा (जातिवाद) किसीने भी माना नहीं है। साधु-सन्तों ने भी कभी स्वीकार नहीं किया। ये आप सबको भी पता है। ऐसे तो कई साधु-सन्त उदाहरण के तौर पर हैं। अब मैं आपको उनके बारे में नहीं बताऊँगी, मगर आपको सब पता है। श्री राम जिनकी आज नवमी है, उन्होंने भी एक भिलनी के हाथ से झूठे बेर बड़े प्रेम और आनन्द से खाये थे। इसमें उन्होंने क्या सिद्ध किया? यही कि यह जातियाँ, उँच-नीच ऐसा कुछ नहीं होता है। सब मानवजाति एक है। सबमें कुण्डलिनी स्थित होती है। सबमें यह कुण्डलिनी स्थित है तो आप ऐसे कैसे कह सकते हो कि, आप की यह जाति है, उसकी वह जाति है। बाद में लोगों ने तो कुछ ऐसा ही (जातिवादी) विचित्र शुरु कर दिया मगर सब मानवजाति एक है, यह बात सहजयोग सिद्ध कर सकता है क्योंकि यह कुण्डलिनी शक्ति सब में स्थित है। चाहे वह मनुष्य विलायत से हो या हिन्दुस्थान से हो। सब में अगर यह कुण्डलिनी स्थित है, तो वह इन्सान ऊँच-नीच, इस जाति से, उस जाति से यह कैसे हो सकता है? मैं यह बिल्कुल स्वीकार नहीं करती। आप भी अगर इस बात को ना मानें तो अच्छा है। इसके लिए तो यहाँ पर शोर है धर्मांतर का। धर्मांतर नहीं करना है।

सहजयोग याने धर्मांतर है यह बात सही है। ये बात मैं पहले ही बता देती हूँ कि धर्मान्तर की धर्म केवल भ्रामिक कल्पना मात्र होती है। उस भ्रामिक कल्पना को तोड़कर जो सच्चा धर्म होता है वो हममें जागृत होता है। जो सच्चा धर्म होता है वो हम में जागृत होता है। आत्मा का जो धर्म है वो हम में जागृत होता है और यह उपरी चीज़ें जो हैं फलाँना-वलाँना जिसके भरोसे यह राजनीति वाले लोग अपना पेट भर रहे हैं, वो सब बेकार है। मूर्खता वाली बात है। एक दिन ऐसा आएगा जो पार हो जाएंगे, सहजयोग में कुण्डलिनी जागृति जिनकी होगी, एक बार जिनका सम्बन्ध चैतन्य से होता है तो यह जात-पात कुछ नहीं रह जाता है। मूर्खता की बातें है।

तो ये जो उत्थान का समय आया है जिसे बाइबल में कहा गया है कि, 'It is your last judgement, resurrection' और कुरान में इसे कियामा कहा गया है और इन्होंने जो भी लक्षण बताये हैं वो सभी लक्षण साक्षात् (इसमें) है। इसके बाद आपको पता चलेगा कि यह मुसलमान, ईसाई, हिन्दू इस किस्म के कोई भी प्रकार ईश्वर की नज़र में नहीं होते। ईश्वर ने ही इन सबको एक के बाद एक भेजा है। सब कबूल है मगर उन्होंने (ईश्वर ने) इस प्रकार के अलग-अलग धर्म बनाने के लिए नहीं कहा था।

अब मैं कभी-कभी रोम में होती हूँ, कभी इटली में तो वहाँ पर मेरे साथ उन्होंने बहस की कि, 'हमें एक धर्म नहीं चाहिए।' तो मैंने कहा, 'अलग-अलग धर्म भी क्यों चाहिए? झगड़ा करने के लिए? एक ही धर्म नहीं क्योंकि फिर झगड़ा हीं नहीं कर सकते। एक ही धर्म में कैसे लड़ सकते हैं?'

यह धर्म 'स्व' का धर्म है। शिवाजी महाराज ने बताया, **'स्वधर्म को बढ़ाइये।'** वे तो साक्षात् साक्षात्कारी थे और उन्होंने बताया है कि, आप 'स्व' के धर्म को बढ़ाइये और हम यही कार्य कर रहे हैं। आप 'स्व' के धर्म को बढ़ाइये। एक बार इस 'स्व' के धर्म को बढ़ायेंगे तो आपको आश्चर्य होगा कि अब तक आप किस अंध:कार में बैठे थे। और सुबह से लेकर शाम तक आप कौन से कर्मकाण्ड में फँसे हुए थे। इससे आपको कोई भी लाभ नहीं होने वाला। अब तक कुछ हुआ है क्या? क्या अब तक कुछ हुआ है? मँजिरे को बजाते हुए आप पंढरी (पंढरपुर) जाइये या मक्का जाइये। सब तरफ एक ही प्रकार है। अंधों की तरह चल पड़ते हैं। कहाँ जा रहे हो? कह रहे हैं मक्का को चले हम। क्या है मक्का में? 'हमें तो जाना ही है, जाने से हम हाजी हो जाएंगे।' 'हाजी-पाजी आप कुछ नहीं होने वाले। बेकार की बाते हैं ये सब।'

अब अगर आपको बताया जाये कि, 'मक्केश्वर ही शिव हैं' तो आपको आश्चर्य होगा। मुसलमानों को आप पूछिए कि 'आप उस पत्थर की पूजा क्यों करते हो? उसके इर्द-गिर्द क्यों घूमते हो? आप तो पत्थर को नहीं मानते, तो फिर किसलिए?' परन्तु अपने शास्त्रों में लिखा हुआ है कि मक्केश्वर ही शिव हैं। वहाँ हिंडोलीला देवी का मन्दिर है। मेरे कहने का मतलब ये नहीं है कि, मोहम्मद साहब ने शिव को कभी कम समझा है, बिल्कुल नहीं क्योंकि शिव शाश्वत हैं, अनन्त हैं। उनको आप अगर कहें कि वे ईसाई धर्म में हैं, इस धर्म में है, उस धर्म में है। वे सभी धर्म में हैं। पर धर्म कहाँ है ये आप मुझे दिखाईये। धर्म ही नहीं रहा अब। सब तरफ अधर्म फैला हुआ है। पैसा खाना, उल्टे धंधे करना ये प्रकार चल रहे हैं।

कहते हैं कि हमें मन्दिर बनाना है। किसलिए? मन्दिरों की यहाँ क्या कमी है? कहते हैं, 'माताजी, पैसे दीजिए, मन्दिर बनवाना है।' कहा, 'बिल्कुल मत बनाओ।' पहले आप अपने हृदय के मन्दिर बंधवाओ। अपने हृदय में ईश्वर का मन्दिर जब बनायेंगे तब कहीं जाकर यह उल्टे धंधे छूट

जाएंगे। छूटने ही चाहिए, वर्ना तो भुगतो उसके फल। उसकी भुगतान तो चल ही रही है। अब हमें अगर भोगना है तो वह है परमानन्द को। एक बार ईश्वर की कृपा आप पर हो गयी और उस परम चैतन्य से आपका अगर सम्बन्ध जुड़ जाता है तो फिर और किसी चीज़ की जरुरत नहीं रहती। इन सभी प्रकार के झूठे अगुरुओं के बारे में मेरा एक ही कहना है कि सब को विज्ञान से परिचित होना चाहिए, विज्ञान से मुकाबला करना चाहिए, वैज्ञानिकों से मुकाबला करना चाहिए। अगर वे वैज्ञानिकों से जीत जाते हैं तो फिर वो सच्चे हैं, नहीं तो वो झूठे। हमारा तो रात-दिन इन वैज्ञानिकों के साथ ही कार्य चलता रहता है। फिर चाहे वह वैद्यकशास्त्र हो या भौतिक विज्ञान हो या कोई अन्य भी शास्त्र हो सभी ने सिद्ध किया है। मगर मुझे ऐसा महसूस होता है कि, अपने यहाँ के वैज्ञानिक अभी भी निचले स्तर पर ही हैं। वे आएंगे नहीं पूछने वहाँ। मैं थी रूमानिया में, उन्होंने (रुमानिया वालों ने) एक वैद्यकशास्त्र सम्मेलन आयोजित किया था। वहाँ मुझे बात करने के लिए कहा गया था। तब मैंने उन्हें बताया कि यकृत की तकलीफों से क्या-क्या समस्यायें होती हैं।

अब ये सारा ज्ञान, विज्ञान से भी परे है, बुद्धि से परे है। उनकी बुद्धि से भी परे है, उन्होंने मुझे एकदम ही डॉक्टरेट की उपाधि प्रदान की। असल में उन्होंने डॉक्टरेट की उपाधि दी। मैं तो उनके विश्वविद्यालय में पढ़ी हुई भी नहीं थी। कुछ नहीं। मैंने कहा, 'आप ये क्या कर रहे हो?' उन्होंने कहा कि, 'माताजी, आपकी दी हुई यह जानकारी कॉग्निटिव साइन्स है (याने बोध-प्रक्रिया सम्बन्धित विज्ञान)।' अब अपने यहाँ के वैज्ञानिकों को कॉग्निटिव साइन्स का अर्थ तक भी पता है क्या! मगर उनका (रूमानिया के साइन्टिस्ट) ज्ञान देखिए कहाँ तक है। एक विज्ञान (साइन्स) भी होता है, जो कि कॉग्निटिव साइन्स है। आइनस्टाईन ने भी कहा है कि जो एक टॉर्शन एरिया होता है, उसमें से जो जानकारी निकलती है वह है कॉग्निटिव। मगर यहाँ के लोगों को समझता भी है क्या कि, कॉग्निटिव साइन्स होता क्या है! बड़े-बड़े साइन्टिस्ट बनते फिरते हैं। उससे क्या फायदा होने वाला है। उन्होंने (रूमानिया के साइन्टिस्टों ने) कहा, 'माताजी, आपका यह सभी ज्ञान कॉग्निटिव है। आप जो ये सब बता रही हैं उसे हम सिद्ध कर सकते हैं।' मैंने कहा, 'करो।' वे इस बात के लिए तैयार हो गये। जब वह सिद्ध हो गया तब वो कहते हैं कि हम मूर्ख नहीं है। आपने जो कहा है वह सत्य है और इसलिए हम आपके चरणों में आये हैं।

तो ये जितने भी गलत गुरु हैं उनसे कहिए कि, 'पहले आप वैज्ञानिकों के सामने जाईए। दो दिनो में वो वैज्ञानिक उनको ठीक करेंगे।' कबूल है कि विज्ञान में नीति-अनीति पर कुछ नहीं लिखा हुआ है। पर ये भी सच है कि वे (वैज्ञानिक) झूठ को मानने वालों में से नहीं है। तो ये जो गुरु आपको दिखाई दे रहे हैं, जो चारों ओर घूम रहे हैं और ये जितने भी राजनीति वाले उन गुरुओं के पीछे-पीछे घूम रहे हैं, उन्हें कहिये कि, 'पहले इनको (गुरुओं को) वैज्ञानिकों से परिचय करा दें और उन वैज्ञानिकों से कहिये कि अब इन्हें (गुरुओं को) देख लें।' हिन्दुस्तान में स्थित वैज्ञानिक इस लायक है या नहीं इस से मैं वाकिफ नहीं हूँ, मगर मैं बाहर के वैज्ञानिकों के बारे में बता सकती हूँ। रशिया में तो ऐसे हैं कि वे लोग तो एकसे बढ़कर एक है। एक से बढ़कर एक वैज्ञानिक हैं। मैंने कहा, 'आप लोग हिन्दुस्तान आइए आपकी कदर की जाएगी।' वे कहते हैं, 'हमें हमारे ही देश में काम करना है।' क्या उनकी देशभक्ति है! उसे देखकर आश्चर्य हुआ।

हम सालों साल लड़ते रहे हैं। हमें स्वातंत्र्य मिला। अब इन लोगों की देशभक्ति गयी कहाँ? वे है ही नहीं। बिल्कुल अदृश्य हो गयी है। पैसा खाते रहते हैं। जिसे देखो वही पैसा खाता रहता है। कुछ खाना-वाना खाते भी हो या नहीं? या सिर्फ पैसा ही खाते हो? यह सब देखकर ऐसा लग रहा है कि इस देश की अस्मिता जो है वो फिर से नष्ट हो गयी है। सन बयालीस में हम जब छोटे थे, तब से ही हम इस में कूद पड़े थे और इतनी छोटी उम्र में भी मैं लीडर रह चुकी हूँ। फिर उन लोगों ने बहुत छल किए, मारा, सबकुछ कबूल है, क्या करें! अगर आप किसी अच्छे कार्य के लिए आये हैं तो ऐसी सब बाते तो होती ही रहेंगी। मगर आपके पुणे में ही ऐसे कितने ऐरे-गैरे गुरु आये हैं और आपने उन्हें सिर पर चढ़ाकर रखा है। अभी भी सब जगह भगवे वस्त्र पहनकर लोग घूम रहे हैं। यह बात बहुत ही लज्जास्पद है। हम सत्य को पकड़े हुए नहीं है, मगर फट से असत्य को पकड़ लेते हैं और वह भी महाराष्ट्र में। अरे, यह महाराष्ट्र तो कितना बड़ा राज्य है। जैसा नाम है महा+राष्ट्र वैसा ही यह राज्य है। मैं तो इस मराठी भाषा की तारीफ करती रहती हूँ। लोगों को बताती रहती हूँ कि आपको यह सीखना बहुत कठिन है, कितने सारे पर्यायी शब्द है, एक-एक शब्द अचूक है।

मराठी लोगों की इस स्थिति को देखकर मुझे आश्चर्य होता है। कभी इस गुरु के पीछे, कभी उस गुरु के पीछे भागते रहते हैं। वो क्या कर रहे हैं, ये खुद उन्हें भी नहीं समझता है। और सभी कहते हैं कि, 'हमने सन्यास लिया है।' 'क्यों?' 'हमने अपने गुरु को सब कुछ दे दिया है।' ये (गुरु) सन्यासी है! यह तो ठग है, आप इसे क्यों दे रहे हो? तो कहते हैं, 'हमारे गुरु को आप कुछ मत कहिए।' मैंने कहा, 'क्यों ना कहूँ। यह तो ठग है। इसे तो मैं हमेशा ठग ही कहूँगी।' मुझे किसी का ड़र नहीं। परन्तु वे छूट गये। बहुत सारे (गलत गुरु के जाल से) छूट गये हैं। पुणे से बहुत सारे (ठग) अपना बोरी-बिस्तर उठाकर भाग गये हैं। परन्तु फिर भी, अभी भी महाराष्ट्र में हर एक गाँव में एक-एक गुरु महाराज बैठा हुआ है। कभी कुछ, कभी कुछ कहते रहते हैं। पैसे खाने के पीछे लगे हैं। 'अरे भाई, कितने पैसे लाया है तू?' यहाँ से इनकी शुरुआत होती है।

अगर आपको सत्य से पहचान करनी ही है तो ऐसे इन्सान से सत्य को पा लें जो आपको सत्य दे। बता सके। बेकार के लोगों के पीछे जाने में कोई मतलब नहीं है। कुछ नहीं मिलेगा हमें। कभी-कभी तो ये सब देखकर बहुत दुःख होता है। अच्छे-अच्छे घराने से हैं ये लोग। मेरे सामने इन लोगों की आँखे ऐसे गोल-गोल घूमने लगी। तो मैंने पूछा, 'कौन हैं आपके गुरु?' 'वह फलाने-फलाने हमारे गुरु है।' अच्छे खासे रईस लोग हैं। 'हमारा तो सबकुछ लुट गया। कुछ भी नहीं बचा। एक पैसा भी नहीं बचा। और हमारी आँखे ऐसी गोल-गोल घूम रही है।' 'वाह! वाह! अब ये गुरु है कहाँ?' तो कहते हैं कि, 'ईश्वर के पास गये।' परमेश्वर के पास गये या नर्क में इसका पता लगाईये। ऐसी बातें होती रहती है। पुणे में अच्छे-अच्छे लोग जो खुद को बुद्धिजीवी कहलाने वालों का अगर ये हाल है तो बेचारे गरीबों का क्या हाल होगा? और भी ऐसी कितनी सारी बातों ने पुणे को हिलाकर रखा है। ये सब इस पुणे के अन्दर कैसे घुस आई है इसका मुझे पता नहीं लग रहा है। मगर फिर भी इसे पुण्यपट्टणम् कहते हैं। इस पुणे में इतनी गन्दी बातें आईं कहाँ से? क्या इसका मतलब अपनी संस्कृति जो है, वह मूर्खता से भरी हुई है? यह (पुणे) संस्कृति का एक महासागर है। मुझे विदेशी लोगों ने कहा, 'माताजी, आप भारतीय संस्कृति पर एक पुस्तक लीखिए।' मैंने कहा, 'हो गया।' इतने बड़े सागर को मैं कैसे पार कर सकती हूँ? एक-एक बात का इतनी बारीकी से विश्लेषण किया गया है माने हिन्दू धर्म वगैरा नहीं, परन्तु उनके तत्त्व, विधानों

का। धर्म वगैरह का नहीं।

हमें हिन्दू किसने कहा? अलेक्झांडर ने। वह सिन्धु नदी से आया था। वह तो ग्रीक था। वह 'स' नहीं कह पाया। उसने 'हिन्दू' कहा इसलिए हम हिन्दू। हिन्दूओं से कोई सम्बन्ध नहीं। यह तो अपनी संस्कृति है। और अपनी संस्कृति में इतनी सारी छोटी-छोटी बातें हैं, इतनी सारी सूक्ष्म बातें बताई गयी हैं। बोया हुआ उभर तो आया है मगर उसका इस्तेमाल नहीं हो रहा है। उस संस्कृति के बारे में हम कुछ बोल ही नहीं सकते क्योंकि वह एक महासागर है। मगर आजकल मैं देख रही हूँ पुणे में सब औरतें अमेरिकन संस्कृति को ज़्यादा मान रही हैं। पहले आप अमेरिका में जाकर देखिए कि वहाँ क्या स्थिति है। वहाँ कितने घर बर्बाद हुये हैं। वो देखिए पहले। वहाँ के बच्चे ड्रग्ज लेते हैं। औरतें दारू पीती हैं। यह सुनकर मुझे तो बड़ा आश्चर्य हुआ। उनकी क्या स्थिति है वो देखिए। वे (विदेशी) अपनी देश की ओर देखते हैं और अपनी भारतीय संस्कृति, वहाँ जाने से पहले ही वे कहेंगे कि 'हमारा वहाँ साक्षात् रूप ही बैठा हुआ है, वह जाएगी कैसे?' हमें तो अमेरिकन लोग बहुत अच्छे लगते हैं। वहाँ के लोग तो कर्ज के बोझ पर जी रहे हैं। वह देश भी कर्ज में डूबा हुआ है। उनकी खोपड़ी उल्टी है। उनसे कुछ सीखना नहीं है हमें। जो कुछ सीखना है वह अपने अन्दर ही है। जो कुछ ज्ञान का भण्डार है वह अपने अन्दर ही है। उसी को हासिल करना है। मुझे तो आश्चर्य हुआ कि जब लड़कियों को, औरतों को रास्ते से जाते देखा बाल कटा कर, छोटे-छोटे स्कर्ट पहन कर। रंग तो हिन्दुस्तानी ही है और चल पड़े। वे कहते हैं कि अमेरिकन है यह लड़कियाँ, ये औरतें। ऐसा क्या! नहीं रे बाबा, ऐसे अमेरिकन नहीं चाहिए। उनसे कुछ भी सीखने वाली बात ही नहीं है। वही लोग (अमेरिकन) हमसे सीखने आते हैं। हज़ारों की तादाद में यहाँ लोग क्यों आते हैं, इस बारे में आपने कभी सोचा है!

सत्य की खोज में वे हिन्दुस्तान में आते हैं। परन्तु कोई नट (अभिनेता), कोई गुरु उनको पकड़ लेता है। हवाई अड्डे पर ही पकड़ लेता है। और यहाँ आ जाते हैं। आपको आश्चर्य होगा कि परदेसी सहजयोगी जब यहाँ आते हैं तब वे आपकी मातृभूमि को वन्दन करते हैं, उसे चूमते हैं। 'महाराष्ट्र से श्री माताजी आईं हैं।' देखो उनका कमाल, उनकी पहचान देखिए। उनकी समझ देखो। क्या हम में है ऐसी समझ? सब कुछ मान लिया, फिर भी हमारी संस्कृति गई कहाँ?

मैं गांधीजी के साथ थी, तब उनका पूरा ध्यान सहजयोग पर ही था। वे कहते थे कि सब धर्मों का तत्व निकालकर अगर इकठ्ठा किया जाए तो एक नया धर्म बना सकते हैं हम। मैंने कहा, 'मैं वही करने वाली हूँ।' और वह धर्म है सहज धर्म। तब गांधीजीने कहा था कि यह बात मुश्किल नहीं है क्योंकि ये हमारी संस्कृति है, तो ये कोई मुश्किल नहीं है। बिल्कुल मुश्किल नहीं। एकदम आसानी से हो जाएगा। यह बात घटित हो जाएगी। अपने सभी शास्त्रों में यह कहा गया है कि, आत्मसाक्षात्कार होना ही चाहिए। हर धर्म के शास्त्र में यही लिखा है। जो भी झूठे नाटक करते रहते हैं उनका धर्म से कोई ताल्लुक नहीं है। **सब धर्मों में एक ही बात लिखी गयी है कि, 'आप आत्मसाक्षात्कार को प्राप्त करो।'** इसका मतलब यह है कि यही मार्ग है (आत्मसाक्षात्कार का), यह बात बिल्कुल साफ है।

सब कुछ लिखा हुआ है, फिर भी लोग इसे समाजवाद कहते हैं। अरे उस समाजवादी रशिया को जाकर देखें कि उसका क्या हाल बना हुआ है। इस समाजवाद को क्यों लेकर बैठे हो? सिर्फ यही दिखाना चाहते हैं कि हम पाश्चात्य हैं। अरे, आप जो हैं वहीं दिखाइये। वो बहुत ही बड़े हैं। उनकी महिमा बता नहीं सकते, इतनी बड़ी बात है वो।

मैं छोटी थी, केवल सात बरस की तब गांधीजी के पास गयी। उन्होंने कहा, 'तुम्हारा सहजयोग शुरू करेंगे हम।' सबसे पहले स्वतन्त्र होना है। बिना स्वतन्त्रता के आप 'स्व' का तन्त्र कैसे चला सकोगे? इसलिए हमने इस स्वतन्त्रता की लड़ाई में हिस्सा लिया, मेहनत भी की। मगर आज देख रही हूँ मैं, लोगों के तो नये पर ही निकल आये हैं। ये कैसे हुआ? गांधीजी की एक ही गलती हुई थी कि उन्होंने जवाहरलालजी को सिर पर बिठा के रखा था। ये क्या हिन्दुस्तानी था? पक्का ब्रिटिश मनुष्य था। उन्हें तो कुछ भी पता नहीं था। उन्हें तो अपनी संस्कृति के बारे में जरा भी जानकारी नहीं थी। जिसको कुछ भी पता नहीं था ऐसे इन्सान को सिर पर बिठाने की क्या जरूरत थी? और कोई उन्हें नहीं मिला था क्या? यही एक गलती गांधीजीने की और इन्हीं गलतियों का फल हम अभी तक भुगत रहे हैं। तुरन्त शुरू हो गया पाश्चात्य रहन-सहन। सब कुछ पाश्चात्य तरीके से होने लगा। जिन लोगों को तो नहाना भी नहीं आता है, ऐसे लोगों से क्या सीखना? मुझे तो ये भी समझ में नहीं आ रहा है कि लोग इन सभी बातों को और संस्कृति को कैसे स्वीकार करेंगे? उधर जाकर देखिए कि वहाँ उनकी क्या स्थिति है। इंग्लैण्ड को देखिए, इंग्लैण्ड में हजारों की तादाद में बच्चे ड्रग्ज लेते हैं। एडस्, ड्रग्ज और हिंसाचार ये तीन भयंकर बातें वहाँ पर होती है। इसके बारे में आप सबको क्या बतायें?

वे इन सभी चीज़ों से घबराकर सहजयोग में उतर गये हैं। उन्होंने कहा, 'माताजी, आप यह सारी चीज़ें मत लाने दीजिए।' मैंने कहा, 'नहीं लाने दूँगी।' अजी छोटी-छोटी बातें भी उन्हें पता नहीं। फ्रान्स में हमने महाराष्ट्र की लड़कियाँ दी (ब्याही) है। उन्होंने कहा, 'माताजी, इन्हें कुछ भी पता नहीं।' मैंने कहा, 'ऐसा क्या! क्या मतलब?' 'बाहर से आते हैं और एकदम से पानी पीते हैं।' आप चाहे कश्मीर में जाएं या इधर महाराष्ट्र में रहें, हम सबको पता है कि केला खाने के बाद पानी नहीं पीते हैं। ऐसी छोटी-छोटी बातों से लेकर सब बड़ी-बड़ी बातें हमें पता है। मैं जो बता रही हूँ वह सब तो आपको पता है ऐसा सोचना मूर्खता है। मगर एक बात साफ है कि मैंने जो कुछ भी देखा, वह आपने नहीं देखा है। याने कि 'बंद मुठ्ठी सवा लाख की', वैसा ही आपको लगता है, पर इन लोगों में तो अकल ही नहीं है। आयेगी भी तो कैसे आयेगी अकल? उनके पास संस्कृति नाम की चीज़ ही नहीं है। इतनी बड़े संस्कृति के महासागर में रह कर अगर हम मूर्खों जैसा बर्ताव करेंगे और अगर कल आपके बच्चे भी ड्रग्ज लेने लगेंगे, ऐसे उल्टे धंधे करने लगेंगे तो बाद में आप चिल्लाने लगेंगे। वहाँ के बच्चों का क्या, जब माँ-बाप का ही ठिकाना नहीं? परिवार (फैमिली) है ही नहीं। इस सिलसिले में तो वे बिल्कुल बेशर्म लोग हैं। खुद आकर बतायेंगे कि मैंने अपनी बीवी को तलाक दे दिया है। ऐसा क्या! फिर तो हमारा नमस्कार।

ये अंग्रेजी भाषा सीखकर जो आपका हाल हुआ है इसे देख कर मुझे आश्चर्य होता है। अंग्रेज भाषा सीखने की कोई जरूरत नहीं। मैंने कभी अंग्रेजी भाषा सीखी नहीं है। मराठी पाठशाला में मेरी पढ़ाई-लिखाई हुई है। सब कुछ मराठी में। उसके आगे साइन्स में भी अंग्रेजी भाषा नहीं थी और मेडिकल में भी नहीं थी। वे कहते हैं, 'आप तो ऐसी अंग्रेजी बोल लेती हैं, वाह!' अजी, इस अंग्रेजी भाषा में कुछ दम ही नहीं है। ये आत्मा को स्पिरिट, भूत को भी स्पिरिट, दारू को भी

स्पिरिट कहते हैं। इसका मतलब आत्मा और स्पिरिट एक ही है क्या? तो उन्होंने कहा, 'आत्मा और स्पिरिट एक ही होने चाहिए।' मैंने कहा, 'अरे, यह क्या? क्या संपदा है अपनी!'

अब ये जो संस्कृति है, उसकी सम्पदा, उसका तत्व क्या है? वह है अध्यात्म। अध्यात्म ही उसका तत्त्व है। अपने को कुछ खास समझकर घमंड़ करने में कोई अर्थ नहीं है। उसके अन्दर का जो तत्त्व है वो अध्यात्म का है। और उस अध्यात्म की जो परिसीमा है वह है आत्मसाक्षात्कार। यह बात आपको समझ लेनी चाहिए। अध्यात्म के बिना सिर्फ बक-बक करना, यहाँ-वहाँ जा कर सिर्फ प्रवचन देना और अब ये जो संस्कृति है उसकी सम्पदा, उसका तत्व क्या है? वह है अध्यात्म। अध्यात्म ही उसका तत्त्व है। अपने को कुछ खास समझकर घमंड़ करने में कोई अर्थ नहीं है। उसके अन्दर का जो तत्त्व है वो अध्यात्म का है। और उस अध्यात्म की जो परिसीमा है वह है आत्मसाक्षात्कार का, यह बात आपको समझ लेनी चाहिए। अध्यात्म के बिना सिर्फ बक-बक करना, यहाँ-वहाँ जा कर सिर्फ प्रवचन देना और ऐसे जो भी प्रकार हैं उससे कुछ हासिल नहीं होने वाला है। सत्रह प्रवचन सुनकर भी आप में कोई बदलाव नहीं आने वाला है, आप जैसे थे वैसे ही रहने वाले हो। आपको कुछ भी फायदा नहीं होगा? आपको **आत्मा के दर्शन से ही फायदा होगा।**

उसी आत्मा के प्रकाश में आप जब देखोगे तो आपको आश्चर्य होगा कि नीर-क्षीर विवेक, जैसे पानी एक तरफ और दूध एक तरफ, दोनो अलग-अलग हैं, साक्षात् वैसे ही बोध होगा आपको। आप कोई गलत काम कर ही नहीं सकते। आप कभी अपने रास्ते से भटक नहीं सकते। कहने का मतलब यह है कि आज यह समय की पुकार है। और आप सभी कह रहे हैं कि दो हजार वर्ष खत्म हो रहे हैं। उसके बाद सत्य युग आएगा। उसमें अगर जमे रहना है तो सत्य पर खड़े रहना आवश्यक है। यह फालतू के ढोंगीपन के प्रकार नहीं चलेंगे। अधिक बकबक, बहुत ज़्यादा बोलना, सिर्फ यह दिखाना कि हम कुछ विशेष हैं, पढ़ाई में विशेष हैं यह सब कुछ नहीं चलेगा। बस यही देखा जाएगा कि आप सत्य पर खड़े हैं या नहीं और अगर हैं तो आपको कोई भी हाथ तक नहीं लगा सकता। अजी, हमारे सहजयोगियों को साँप भी नहीं काटता। कुछ नहीं होता उन्हें। वे कहते हैं, 'माताजी, आपका हमें संरक्षण है।' कैसा संरक्षण! अरे, आप तो खुद अपने आप पार हो गये हैं। ईश्वर के साम्राज्य में आ गये हैं आप, मैं किस तरह से संरक्षण दूँगी। ऐसी एक नयी स्थिति आने वाली है। एक नया जगत तैयार होने वाला है। उस जगत में, क्राइस्ट के कहे अनुसार यह लास्ट जजमेंट है। **जो चुने जाएंगे, वे रह जाएंगे, वही रह जाएंगे, बाकी सब जाएंगे। खत्म होंगे, खानदान सहित, गर्भ सहित और पूरी मूर्खता सहित।** ऐसा में मैं आज जानबूझकर आप लोगों को खास बताने के लिए ही आयी हूँ, विशेष करके महाराष्ट्र को।

पुणे शहर जो पूरे महाराष्ट्र का हृदय है, परन्तु यहाँ क्या-क्या धंधे आ गये हैं, यह आपको पता है। यह बात बताने की जरूरत नहीं है। अब आगे तो इसे पुण्यपट्टणम करके ही छोड़ना है, पूर्णतया, पुणे में ही उतरना चाहिए। उसके लिए मैं आपको यह नहीं कह रही हूँ कि यह छोड़ दो, इसको छोड़ दो, घर छोड़ दो, अपने बीवी को छोड़ दो। मैं तो यह तक भी नहीं कहती कि दारू छोड़ दो। दारू तो अपने आप छूट जाती है। ड्रग्ज भी अपने आप छूट जाते हैं। सब कुछ छूट जाता है। ये सब मैं आपसे नहीं कहती हूँ क्योंकि एक बार अपने आप साफ होने के बाद, कमल जैसे साफ होकर ऊपर उठने के बाद तो किसी प्रकार की गन्दगी नहीं रह जाती। पूरी तरह से निर्मल हो जाओगे। सब कुछ ठीक-ठाक हो जाएगा और यही एक माँ की इच्छा है। उसी के लिए तो यह सब कोशिश है। अभी मेरी इतनी उम्र हो गयी है, फिर भी मुझे ऐसा लगता

अजी, हमारे सहजयोगियों को साँप भी नहीं काटता।

है कि अभी भी इतना कुछ हुआ नहीं है। पूरी तरह से लोगों के दिमाग में गया नहीं है। जब भी मैं अखबार पढ़ती हूँ तब ऐसा लगता है कि ये लोग किस कदर मूर्खता वाली बाते कर रहे हैं। आपस में लड़े जा रहे हैं। कहाँ पहुँच गये हैं आप लोग! अब तो २००० साल पूरे होने जा रहे हैं और आप लोग वही सब कर रहे हैं? जातीवाद वगैरा कुछ भी नहीं है। सब असत्य है। यह सब कुछ ढोंग हैं ऐसा कुछ भी नहीं है।

अभी इसे सिद्ध करके दिखाना आपका काम है। बिना मतलब के मेरे विरोध में यहाँ के लोगों ने इतने सारे मुद्दे उठाये थे। मुझे उसकी कोई परवाह नहीं। मगर उन्होंने खुद अपने आप में क्या किया, यह उन्हीं से पूछना चाहिए।

अब हमारा सहजयोग अस्सी देशों में फैल गया है, ऐसा यह कह रहे थे। मुझे तो कुछ पता नहीं। वह ऐसे हुआ कि, एक मनुष्य पार हो गया तो वो जाकर दूसरे को पार करता है, दूसरा तीसरे को पार करेगा, ऐसा करते-करते अस्सी देशों में शुरू हो गया है। इन अस्सी देशों में कहीं भी वाद-विवाद नहीं है, लड़ाई-झगड़े भी नहीं है, पैसे खाने का कहीं चक्कर भी नहीं है, कुछ भी नहीं है। ऐसे कैसे हो सकता है? हमारे यहाँ तो दो घरों में भी नहीं रह सकते हैं। दो व्यक्ति एक घर में रहें तो उनकी कभी आपस में बनती नहीं। मगर ऐसी पात्रता इनमें आयीं कहाँ से? यह सामूहिक चेतना, नयी किस्म की जो चेतना है वो मानवी चेतना के परे है। यह जागृत होने के बाद दूसरा कौन? सभी एक ही ईश्वर के चरणों में हैं। अब तक ईश्वर का नाम लेते ही लोग उठ कर चले जाते थे, जैसे कि ईश्वर उनका दुश्मन हो। ये जो बुद्धि के खेल हैं, उन्हें बन्द करके जो सत्य है उसे देखिए। बहुत हो गया। खुद को 'हम कुछ खास हैं' समझना, इसका कोई अर्थ नहीं है।

एक दूसरा अनुभव ऐसा है कि लोगों का मानना है कि महाराष्ट्रीयन लोग घमण्डी हैं। वे बहुत गर्वी हैं। ऐसा मानना सत्य नहीं है। कहते हैं कि यहाँ एक साधारण बराबरी का इन्सान भी मिलीटरि के कैप्टन की तरह सीना तानकर चलेगा मगर इधर नॉर्थ इंडिया में एकदम चूहों की तरह आपके सामने बैठते हैं। 'अरे भाई, इसमें मैं क्या कर सकती हूँ।' कहते हैं कि वहाँ तो लोगों को भयंकर खुद के बारे में घमण्ड है। 'हम' मतलब कौन? शिवाजी के गोद लिए बच्चे हैं हम सभी। ऐसे में ध्यान देना चाहिए। जब तक आप में आत्मा का आनन्द नहीं आएगा, आपको अपना स्वरूप दिखाई नहीं देगा, तब तक यह दैविक गुण आपमें प्रकाशित नहीं होने वाला है। एक बार वह प्रकाश आप में प्रकाशित हो गया, कुण्डलिनी के जागरण से आप अगर चारों ओर फैले हुए इस ईश्वर के साम्राज्य में उतर जाएंगे तो आपको ताज्जुब होगा कि, यह सब कैसे घटित हुआ? यहाँ तक मैं कैसे पहुँचा? अजी, यह आप में स्थित है। यह सिद्ध है। यह तो आपका जन्मसिद्ध अधिकार है। यही योग आप लोगों ने प्राप्त करना है। इसके लिए कुछ अलग करने की आवश्यकता नहीं। कुछ देने की जरूरत भी नहीं। सिर्फ आपने लेना है। लेना इसका मतलब आपने नम्रता के साथ बैठना चाहिए। गुस्ताख इन्सान अगर होगा तो उसकी कुण्डलिनी, चाहे जितना भी प्रयत्न कर लें, पर वह जागृत ही नहीं होगी पर विनम्र मनुष्य की कुण्डलिनी झट से जागृत हो जाएगी। आप सब अपनी कुण्डलिनी का जागरण कर लीजिए यही मेरी विनती है। मुझे और कुछ नहीं चाहिए। ऐसा अगर एक बार मैंने देख लिया, तो बस, मुझे और कुछ भी नहीं चाहिए।

मैं पुणे में आकर रहने लगी। इसके पहले भी बहुत सालों से मैं यहाँ पर मेहनत कर रही हूँ। सिर्फ पिछले बार नहीं आयी तो इस बार इतना सारा उत्साह है लोगों में, हवाई अड्डे पर उत्साहपूर्ण दिखे वे मुझे। बहुत ही आनन्द हुआ और इसी आनन्द में मैं आपको कहती हूँ कि यही उत्साह आपने अपनाना है और वह एकदम सहज है, बिल्कुल सहज है यह आप सब में।

सबको मेरा अनन्त आशीर्वाद। कृपा करके यह आशीर्वाद स्वीकार कीजिए।

श्री राम नवमी

अक्तूबर १९८७, स्विटज़रलैण्ड

अनुवादित

यह त्यौहार श्रीराम के जन्मदिन के रूप में मनाया जाता है। श्रीराम की कहानी बहुत दिलचस्प है और अब भारतवर्ष में उनकी बहुत सुन्दर जीवनी टैलिविज़न पर आती है। ऐसा कहा जाता है कि उनकी कहानी उनके जन्म के पूर्व ही लिखी गई थी। ऋषि वाल्मिकी ने जन्म के भनक घटने के पहले पूरी कहानी लिख दी थी। श्रीराम का जन्म सूर्य वंश में हुआ था। वे अग्नि के आशीर्वाद से, सूर्य वंश में पैदा हुए। सब अवतरणों में से, वे सब से शान्त अवतार थे। मेरा मतलब है–संकोच। वे किसी भी समस्या को हल करने के लिए दूसरों को बताने के बजाय स्वयं करते थे और उसके लिए किसी भी सीमा तक चले जाते थे। यही उनकी सबसे बड़ी खासियत थी।

श्रीराम से उनके राज्य के लोग बहुत ही प्रेम करते थे। उनकी पत्नी बहुत ही सुन्दर, बड़े आदरणीय पिता की पुत्री थी। वे अपने पिता के प्रिय पुत्र थे। वे बहुत ही विनम्र थे, आप उनके चरित्र में इसकी सुन्दरता देख सकते हैं।

हंसा चक्र इलाज

हंसा चक्र ये विशुद्धि चक्र का ही एक भाग है
और ये दोनो आँखों के बीच स्थित है।

हंसा चक्र एक बहुत भौतिक चीज़ है और उस पर भौतिक स्तर पर ही कार्य किया जाना चाहिए और इसी से साईनस, ज़ुकाम, खाँसी आदि होता है और यह सब अन्दर की गर्मी के कारण नाक के अन्दर से सूखने के परिणाम स्वरूप होता है। भारतीय खास कर महाराष्ट्रीयन कड़क स्नान लेते हैं, अर्थ है कि बहुत गर्म पानी से.....यह एकदम गलत धारणा है। साधारणतया ठण्डे पानी का स्नान सबसे अच्छा है....परन्तु यदि मुमकिन न हो, तो गुनगुने पानी से लें। इससे एक यह समस्या हल होगी कि आप स्वयं को बहुत गर्मी या बहुत सर्दी में खुला नहीं छोड़ते-पानी का तापमान कमरे के तापमान के अनुसार होना चाहिए। कुछ लोग फेफड़ों के कैन्सर से मर गए हैं क्योंकि वे सुबह जल्दी नहा कर घर से बाहर निकलने की अपनी बुरी आदत को नहीं छोड सके। मैं यह बुरी आदत भारतीयों के लिए कह रही हूँ, न कि इंग्लिश के लिए... क्योंकि वे नहा कर तुरन्त काम पर चले जाते हैं। सो आप सुबह चार बजे स्नान करें, घर पर रुकें और तापमान के अनुकूल हो जाईये और फिर बाहर जाएं.... या रात को स्नान करें।

अतिशयता का आचरण, बायें से दायें के कारण हंसा चक्र में समस्या पैदा करता है..... जैसे कि, यदि आप कोई फल खाते हैं, तो उसके बाद पानी नहीं पीना चाहिए। कुछ कार्बोहाइड्रेट खाकर पानी पीना चाहिए.....पर कुछ तला हुआ नहीं खाकर। कुछ तला हुआ खा कर पानी नहीं पीना चाहिए-आप बिस्कुट या ब्रैड खा सकते हैं, ताकि आप का गला सूख जाए और फिर पानी लें।

अब गर्मी और ठण्ड.....उदाहरण के तौर पर कॉफी पी कर पानी लेना एकदम गलत है। पानी यदि आप लेते हैं तो धीरे-धीरे गर्म होने दे और फिर अन्त में कॉफ़ी लें...और फिर पानी नहीं लें, जब तक कि आप कुछ कार्बोहाइड्रेट न खा लें। मेरा कहने का तात्पर्य है कि गर्म और सर्द का सम्बन्ध समझ लेना चाहिए।

वास्तव में आप प्रकृति के कुछ नियमों का उल्लंघन कर रहे हैं.... जैसे कि लन्दन आदि स्थानों में कमरों के अन्दर गर्मी रहती है.... वहाँ बड़ी खुश्कता होती है.... हमें यह पता है कि इग्लैण्ड में हमे आद्रता का यंत्र (ह्यूमिडीफायर) जरूरी है। किसी बाल्टी या टब में पानी भर दें व इसे खुला रखें ताकि कमरे में आद्रता (नमीं) हो जाए अथवा इन सब की पूर्ति के लिए हम यह भी कर सकते हैं कि थोड़ा गुनगुना पानी ले कर उसमें जरा सा नमक ड़ालें, दाँत ब्रश करने के बाद उसे नाक में डालें। इसे तीन बार अन्दर लें व तीन बार बाहर निकालें, इससे आपके साइनस स्वच्छ हो जाएंगे व आप उन्हें नम कर लेंगे।

भारतवर्ष में रिवाज है कि गर्म-गर्म खाना खाओ....इतना गर्म कि वे असल में गर्म लोग हैं। इग्लैण्ड में वे बहुत ठण्डा खाना खाते हैं। मैं तो हैरान हूँ कि वे कितनी आइसक्रीम खाते हैं। बिना किसी सोच-विचार के, वे आइसक्रीम खाएंगे और उसके बाद कॉफी लेंगे या फिर आइसक्रीम खाने के बाद वे गर्म लेंगे..... वह तो सबसे खराब है। हम समझते नहीं हैं कि गर्म और ठण्डे में कैसे अन्तर करना चाहिए। खाना भी अवन से निकाल कर तुरन्त गर्म नहीं खाना चाहिए-गर्म धुआँधार खाना

(सिज़लिंग) नहीं खाना चाहिए। मुझे मालुम नहीं कि क्यों ऐसे शैतानी विचार आते हैं-खाना पचाने के लिए अन्दर के ज्यूस बहने दीजिए और तब खायें अन्यथा आप अपनी जीभ जला लेंगे.... अपना मुँह का तालू जला लेंगे.... सब कुछ जला लेंगे। सो यही सबसे अच्छा होगा कि आप खाने के बारे में समझदारी रखें-पानी भी बहुत गर्म नहीं होना चाहिए और खाना भी अधिक गर्म नहीं होना चाहिए।

अधिकतर लोग ज़ुकाम के कारण हंसा चक्र पर पकड़ते हैं। यदि यह समस्या बाईं ओर से है तो इसे हम अपनी दृष्टि को पृथ्वी पर रख कर सही कर सकते हैं या ईड़ा नाड़ी स्वामिनी, महाकाली मंत्र या सूर्य मंत्र का इस्तेमाल कर के; यदि दाईं ओर पकड़ रही है या लिवर के कारण तो हम चन्द्रमा का नाम इस्तेमाल कर सकते हैं, जो इसे ठण्डा कर देगी।

समसस्याओं में एकतरफ़ा सिरदर्द या साइनस की समस्या आदि होती है या हर समय आप पर निर्णय लेने का बोझ होता है। बहुत तेज़ या खट्टा खाना न खायें, घर या काम के स्थान पर खुश्क स्थितियाँ होने से भी समस्या होती है और उसे नाक में घी या तेल ड़ालकर ठीक किया जा सकता है-केवल एक बूँद दोनो ओर, सुबह-शाम।

मक्खन भी साइनस की समस्या के लिए अच्छा है, इसे ड्रॉपर की सहायता से थोड़ा गर्म इस्तेमाल किया जा सकता है-तीन-चार दिन, नाक के एकदम अन्दर, जहाँ यह अन्दर की शुष्क झिल्लियों को तर करता है-मक्खन नर्म करता है।

सामूहिकता में कृष्णा सिद्धान्त और गुरु सिद्धांत का मिश्रण होता है। जब वे गुरु होते हैं तो सामूहिकता शुरू होती है.....जब ये दोनो सिद्धान्त जुड़ जाते हैं तो सामूहिकता शुरू होती है और परिणाम स्वरूप आपको समझदारी प्राप्त होती है। इस समझदारी (डिसक्रीशन) को बेहतर करने के लिए वाइब्रेटेड घी या मक्खन, थोड़ा गर्म करके नाक में डालें, पर उसके पहले हमें मुँह में नमक के पानी से गरारे करने चाहिए, जो गुरु सिद्धान्त का प्रतिनिधित्व करता है।

हंसा चक्र की नाड़ियों को सन्तुलन में लाने का सबसे अच्छा तरीका 'श्वास-क्रिया' है। एक नथुने से सांस अन्दर लें, दूसरी को अंगुली से बन्द कर लें। थोड़ी देर रोकें फिर दूसरे नथुने से बाहर निकालें (अंगुली हटाकर)। अब इस (दूसरी) नथुने से सांस अन्दर लें (पहली बन्द करें) थोड़ी देर रोकें और पहले नथुने से बाहर जाने दें। रोज इसे तीन बार बहुत धीरे-धीरे करें। सूंघने वाले 'इनहेलर' भी बहुत अच्छे हैं। सबसे बढ़िया 'नेति' है जिसमें नेति के बर्तन टोंटी के नीचे तक पानी लेकर उसमें दो या तीन बूँद 'इनहेलिंग' के डालें, और टोंटी (नली) को एक नथूने में डालें, दूसरे नथुने से अन्दर सांस लें। यह हंसा को साफ कर देती है और बहुत अच्छी, चीज़ है। इसे तीन-चार दिन, रात में सोने के पहले करें और आप एक दम साफ हो जाएंगे। यह असन्तुलन हमारे व्यवहार में असन्तुलन के कारण होता है, जहाँ एक व्यक्ति दूसरे पर दबाव ड़ालना शुरू कर देता है।

नाक में घी ड़ालना एक आसान और महत्वपूर्ण क्रिया है, हंसा चक्र ठीक करने के लिए। 'एडस्' का एक लक्षण खराब हंसा चक्र है। खराब हंसा को सही करने के लिए घी ड़ालना महत्वपूर्ण है नहीं तो आप 'एड्स' के प्रति सम्वेदनशील होते हैं।

हंसा चक्र के इलाज के लिए जो बाहर की ओर से है इसलिए भौतिक है..... या हम घी डालें या वह सब जो बताया है परन्तु हंसा चक्र के लिए यह भी महत्वपूर्ण है कि हम दूसरों को 'किस' न करें। मेरे विचार में 'किस' करना पूर्णतया छोड़ देना चाहिए क्योंकि 'किस' करने में दूसरे लोगों के कीटाणु आते हैं। सहजयोग में यह करना ठीक हो सकता है पर इसका यह अर्थ नहीं कि आप पागलपन से 'किस' करते रहें। यदि आप इस प्रकार के हाव-भाव से अपना प्रेम अधिक प्रदर्शित करते हैं तो अन्दर उतना ही कम हो जाता है। अपने विवेक से, कुछ भी बहुत अधिक दिखावटी रूप से करने से बचना चाहिए। परन्तु बाह्य हाव-भाव अत्याधिक त्यागने से भी विचारहीनता पैदा कर सकती है।

हंसा चक्र का मन्त्र है 'त्वमेव साक्षात, हंसा चक्र स्वामिनी साक्षात, श्री माताजी निर्मला देवी नमो नमः' तीन बार।

हंसा चक्र के दूसरे मन्त्र हैं - प्रणव और ॐकार

श्रीराम पूजा, अक्तूबर १९८७, अनुवादित

शिवरात्री

पूजा

पुणे, २३ फरवरी १९९०

आज शिवरात्री है और शिवरात्री में हम शिव का पूजन करने वाले हैं। बाह्य में हम अपना शरीर है और उसकी अनेक उपाधियाँ, मन, अहंकार बुद्धि आदि हैं और बाह्य में हम उसकी चालना कर सकते हैं, उसका प्रभुत्व पा सकते हैं। इसी तरह में जो कुछ अंतरिक्ष में बनाया गया है, वह हम सब जान सकते हैं, उसका उपयोग कर सकते हैं। उसी प्रकार इस पृथ्वी में जो कुछ तत्व हैं और इस पृथ्वी में जो कुछ उपजता है उन सबको हम अपने उपयोग में ला सकते हैं। इसका सारा प्रभुत्व हम अपने हाथ में ले सकते हैं। लेकिन ये सब बाह्य का आवरण है। वो हमारी आत्मा है, शिव है। **जो बाह्य में है वो सब नश्वर है।** जो जन्मेगा, वो मरेगा। जो निर्माण होगा उसका विनाश हो सकता है। किन्तु जो अन्तरतम में हमारे अन्दर आत्मा हैं, जो हमारा शिव है, जो सदाशिव का प्रतिबिम्ब है, वो अविनाशी है, निष्काम, स्वक्षन्द। किसी चीज़ में वो लिपटा नहीं, वो निरंजन है। उस शिव को प्राप्त करते ही या उस शिव प्रकाश में आलोकित होते ही हम भी धीरे-धीरे सन्यस्त हो जाते हैं। बाह्य में सब आवरण है। वो जहाँ के तहाँ रहते हैं। लेकिन अन्तरतम में जो आत्मा है वो अचल, अटूट और अविनाशी है वो हमेशा के लिए अपने स्थान पर प्रकाशित होते रहता है। तब हमारा जीवन आत्मसाक्षात्कार के बाद एक दिव्य, एक भव्य, एक पवित्र जीवन बन जाता है। इसलिए मनुष्य के लिए आत्मसाक्षात्कार पाना अति आवश्यक है। उसके बगैर उसमें सन्तुलन नहीं आ सकता, उसमें सच्ची सामूहिकता नहीं आ सकती, उसमें सच्चा प्रेम नहीं आ सकता। और सबसे अधिक तो उसमें सत्य ही जाना नहीं जा सकता। सो सारा ज्ञान, जिसे कि शुद्ध ज्ञान कहा जाता है, जिसे कि विद्या कहा जाता है, वो इस आत्मा के ही प्रकाश में जानी जा सकती है, जब मनुष्य इस आत्मा के प्रकाश से आलोकित हो जाता है, तो उसका देखना भी निरंजन हो जाता है। वो देखना मात्र होता है। कोई चीज़ को देखते वक्त उसमें कोई उसकी प्रतिक्रिया नहीं होती है, देखता है और देखने से ही पूरा ज्ञान हो जाता है उस चीज़ का कि यह चीज़ क्या है।

मनुष्य हमेशा जब आत्मसाक्षात्कार से प्लावित नहीं होता तो वह एक तरह से अपने ही बारे में सोचता रहता है।

तो, मनुष्य हमेशा जब आत्मसाक्षात्कार से प्लावित नहीं होता तो वो एक तरह से अपने ही बारे में सोचता रहता है। वो यही सोचता है कि मैं आज क्या खाना खाऊँगा, क्या किसके यहाँ बड़ा अच्छा खाना मिला था। आज कौन से खाने का इन्तजाम करें। नहीं तो फिर वो ये सोचता है कि आज मुझे कहाँ जाना चाहिए, कौन सी जगह मेरा महत्व होगा, कौनसी जगह मुझे लोग मानेंगे, कौनसी सभा में मैं जाकर चमकूंगा। तीसरा सोचेगा कि मैं कौनसा कार्य करूँ जिसके कारण मैं बहुत रुपया इकठ्ठा कर लूँ, बहुत मेरे पास पैसा आ जाए। संसार की सारी सम्पत्ति मैं पा लूँ और सारी दुनिया को मैं ठीक कर लूँ। चौथा सोच सकता है कि कितने मेरे बच्चे हैं, और इनके लिए मुझे क्या करना चाहिए और मेरे बच्चों के बच्चों के लिए क्या करना चाहिए और मेरे रिश्तेदार हैं, उनके लिए मुझे क्या करना चाहिए। इस प्रकार के जो कुछ सारे विचार हैं, यह अपने में लक्षित हैं, कि उसमें मेरा क्या स्थान है। मैं कहाँ हूँ। मेरा उसमें कौनसा विशेष लाभ होने वाला है। मैं आज कौनसे कपड़े पहनूँगा। मैं आज किसको किस तरह से प्रभावित करूँगा। मैं आज कौनसी बात कहूँगा जिससे सब लोग अचंभा में पड़ जाएं। मैं कौनसी कोई ऐसी तरकीब दिखाऊँगा जिससे लोग सोचें कि क्या यह आदमी है! कितना बढ़िया, कितना होशियार, कितना चमत्कारपूर्ण।

जो अपनी आत्मा को जानता नहीं वह हमेशा अपनी ही स्तुति करता है।

दूसरा जो है वो अपने को बहुत नम्रतापूर्वक सबके सामने बार-बार झुक-झुक के नमस्कार करेगा, ये दिखाने के लिए कि मैं बड़ा नम्र हूँ और मैं सबसे बड़े आदर से रहता हूँ। मैं बहुत ज्यादा संस्कृति से भरपूर हूँ। कोई तीसरा कहेगा कि मैं विद्यवान की सभा में जाकर वाद-विवाद करूँगा। मैं बहुत सारी किताबें पढ़ूँगा, उससे मैं अपनी बुद्धि को बड़ा प्रबल कर लूँगा। मैं बुद्धि से, अपने को ऐसे विशेष रूप में प्रकाशित करूँगा कि लोग सोचेंगे कि कितना बड़ा लेखक है, कि कितना बड़ा वक्ता है, कितना बड़ा बोलने वाला है। फिर इसी प्रकार कोई अपने संगीत के बारे में सोचता है, तो कोई अपने कला के बारे में सोचता है। हर चीज़ में आदमी अपने बारे में सोचता है कि मेरी प्रगति कैसी होगी, उससे मैं क्या करूँगा। और बहुत से समाज कार्य भी लोग करते हैं, ये नहीं कि नहीं करते हैं। जैसे कि कोई आदमी अगर डूब रहा है तो उसको बचाने के लिए जो कोई आदमी कूदता है, तो वो भी यही सोच के कि उसके अन्दर जो कुछ 'मैं' है, वह उस आदमी में भी है, इसलिए वह उसको बचाता है। उसको अहसास नहीं होता कि आदमी डूब रहा है इसलिए उसको बचाया है। और उससे भी ऊँचे कार्य मनुष्य करता है। अपने देश के लिए बहुत त्याग करता है, इसलिए कि ये मेरा देश है। मेरे देश के लोगों को सुख मिलना चाहिए। इस तरह से उसमें भव्यता आने लगती है। उसमें महानता आने लगती है। फिर कोई सोचता है कि मेरी जो कला है, वो ऐसी फैलनी चाहिए कि विश्व में हमारे देश की कला फैले। इस तरह से मनुष्य थोड़ा-थोड़ा सा अपने को सामूहिकता में घूलते देख कर खुश होता है। पर उस सब में अपेक्षित होता है कि उसे विजय मिले, उसका यश गान हो, लोग उसकी वाह, वाह करें, यह अपेक्षित रहता है। इसलिए वह सुख और दु:ख के चक्कर में फँस जाता है। यह अपेक्षित रहता है कि उसका नाम सब पर छपे, लोग उसको बहुत माने और उसकी बड़ी मान्यता रखें और कहीं भी वो खड़ा हो, तो कभी भी वो अपमानित न हो। कोई उसको किसी भी तरह से नीचा न करें। कोई भी कितना भी बड़ा संयोजक हो, गर वो आत्मसाक्षात्कारी नहीं है तो उसमें उसका जो बिन्दु आप अपना है, 'मैं' हूँ, जो 'मैं' का बिन्दु है, वो कितना भी बड़ा उसका परिधि बन जाए, पर उसका चित्त उस 'मैं' पर ही रहता है। उस परिधि में उसका चित्त नहीं जाता।

किन्तु जब वह अपने आत्मा से एकाकारिता प्राप्त करता है, तब वह और तरह से बात सोचता है तब वह इस तरह से सोचता है कि इसका उपयोग समाज के लिए कैसे हो सकता है, दुनिया के लिए कैसे हो सकता है। इस आंतरिक पीड़ा के जो लोग हैं, इनके लिए क्या हो सकता है, दुनिया के लिए क्या करना चाहिए। उसका सारा ही विचार अपने से बदल के, उन चीज़ों की ओर जाता है। जब किसी पेड़

को देखता है, उस पेड़ को देखते ही वह सोचता है विधाता ने कितना सुन्दर यह पेड़ बनाया हुआ है। काश! कि मैं भी ऐसा सुन्दर होता। काश! कि मैं भी ऐसा छायाप्रद होता कि लोग मेरे छाया में आकर बैठते। किन्तु मैं ऐसा नहीं। मुझे ऐसा ही होना चाहिए। उस पेड़ की स्तुति में वो गाने लग जाए। किसी हिमालय को देखेगा, तो वो हिमालय की ही स्तुति गाता रहेगा। लेकिन जो मनुष्य आत्मनिष्ठ नहीं होता है, **जो अपनी आत्मा को जानता नहीं वह हमेशा अपनी ही स्तुति गाता रहता है,** कि मैं हिमालय पर गया था, मैंने हिमालय पर ये काम किया। हिमालय में मेरी कब्र बना देना। हिमालय पर मेरा झंडा गाड़ देना, हिमालय पर मेरे देश का झंडा लगा देना। इस प्रकार एकदम दो तरह के लोग होते हैं। एक जो कि आत्मसाक्षात्कारी हैं, आत्मा के प्रकाश में अपने को सारी चीज़ों की ओर दृष्टि डालते वक्त एक व्यापकता से देखते हैं और दूसरी बात कि उनमें यह कभी धारणा नहीं होती कि यह कार्य करने से मेरा नाम बढ़ जाए, या मेरा यशगान लोग करें। कोई लोग उन्हें मार भी डाले, सताए, छले, या चाहे कोई उनकी बुराई करे, वो कभी भी इस चीज़ का बुरा नहीं मानते। जैसे कि आप देख सकते हैं कि ईसामसीह को सूली पे चढ़ाया गया था। सूली पर चढ़ते वक्त उन्होंने एक प्रार्थना की कि, 'हे जगदीश, ये लोग जानते ही नहीं कि ये लोग क्या गलती कर रहे हैं। इनको तुम माफ कर दो।' क्योंकि उनको यही फिक्र थी कि मुझे इतना इन लोगों ने सताया तो न जाने इनका क्या हाल होगा। तो ऐसा **जो आत्मसाक्षात्कारी होता है वह निस्पृह होता है।** उसके अन्दर किसी प्रकार का खिंचाव नहीं रहता कि यह चीज़ होनी ही चाहिए, यह बनना ही चाहिए, वो संकल्प नहीं करता। हो जाएगा तो अच्छा, और नहीं हो जाएगा तो भी अच्छा और जब वो किसी यश और जय को वरण नहीं करता है, उसकी अपेक्षा ही नहीं करता है, तो उसको सुख और दु:ख का चक्कर आता नहीं। सुख और दु:ख में वो समान हो जाएगा। कोई दु:ख आया तो उसे भी देख सकता है, सुख आया तो उसे भी देख सकता है और वो समझता है कि यह रात और दिन का मामला है। खुद वह स्वयं आनन्द में विभोर है क्योंकि **आत्मा आनन्द का ही स्रोत है**। आनन्द के स्रोत में विभोर हो वह किसी भी चीज़ की लालसा नहीं करता। उसको कभी किसी चीज़ की लालसा होती ही नहीं कि इसकी चीज़ को ले लूँ, खसोट लूँ कि इसको ये कर लूँ। उसके दिमाग में यह बातें आती ही नहीं। उसको कभी भी अपने मन को 'कन्ट्रोल' (काबू) ही नहीं करना पडता। वो कहते हैं कि अपने मन व अपने इन्द्रियों को कंट्रोल करिए। वो पूरा कंट्रोल हो जाता है। उसको कोई लालसा नहीं होती, कि ये चीज़ मुझे चाहिए ही और अब उसके लिए प्राण लगा रहे हैं। लोग हैं कि कोई नई चीज़ के प्रलोभन में इस तरह से दौडते हैं कि जैसे उनके लिए वह ही सब कुछ जिन्दगी है और जब वह चीज़ मिलती है, उसके बाद फिर दूसरे चीज़ के लिए दौड़ने लग जाते हैं। अगर वो नहीं मिलती है तो फिर उनको इतना दु:ख होता है, दारूण दु:ख होता है कि वो सोचते हैं कि मेरे जिन्दगी का सब कुछ खत्म हो चुका। फिर ऐसे मनुष्य का जो चित्त होता है वह हर चीज़ को जानता हुआ चलता है। इसके चित्त में ये शक्ति होती है कि जहाँ भी उसका चित्त पहुँच जाए, वह चित्त स्वयं ही कार्यान्वित हो जाता है।

अब चित्त जो है ब्रह्मदेव की देन है। लेकिन जब ब्रह्मदेव या ब्रह्मदेव का सिर्फ ब्रह्म ही रह जाता है तो ऐसा चित्त इतना प्रभावशाली होता है, इतना प्रेममय होता है, इतना सूझबूझ वाला

जो आत्मसाक्षात्कारी होता है वह निस्पृह होता है।

होता है और इतना होशियार होता है कि वो अपने कार्य को बड़े ही सुगम तरीके से कर लेता है। मतलब ये कि ऐसे आदमी का चित्त परम चैतन्य से एकाकारिता प्राप्त कर लेता है और जब परम चैतन्य से एकाकारिता हो गयी तो परम चैतन्य तो सारे कार्य को करता ही रहता है। तो जितने भी कर्म है दुनिया के वो सिर्फ ये ब्रह्मशक्ति, ये परम चैतन्य करते हैं और ये जो कर्म मनुष्य कर रहा है वो उस वक्त ये नहीं सोचता कि मैं कर रहा हूँ। उसको इसकी अनुभूति ही नहीं होती। वो तो यही सोचता है कि हो रहा है। ये घटित हो रहा है। ये बन रहा है। अकर्म में जिसको कहते हैं उतरना क्योंकि परम चैतन्य ही सारे कार्य कर रहे हैं तो मैं एक माध्यम मात्र बीच में हूँ। आत्मा के प्रकाश से ही यह हो सकता है। नहीं तो कभी नहीं हो सकता है। अगर मनुष्य कहे कि मैं सारे कार्य करता हूँ, परमात्मा पर छोड़ देता हूँ पर छोड़ नहीं सकता, ये झूठ बात है। इस तरह कोई सोचता है तो अपने को दगा दे रहा है और झूठ पर खड़ा है। सच बात यह है कि परम चैतन्य ही सब कार्य को कर रहा है, बहुत सुगम तरीके से। इतना सुन्दर उनका कौशल्य है, इतनी युक्तियाँ हैं कि मनुष्य आश्चर्य में पड़ जाता है कि किस तरह वो कार्य करता है। और जब मनुष्य उस प्रकाण्ड श्रद्धा स्वरूप अपने एक विशाल हृदय में बहुत से लोग बताते है कि माँ इतना बड़ा चमत्कार हो गया, मैंने तो सिर्फ प्रार्थना की और कार्य हो गया, इतना बड़ा चमत्कार हो गया।

कर्म तो हम नहीं करते हैं। कर्म तो परम चैतन्य कर रहा है। सारे कर्म वही करते हैं, हम तो 'मिथ्या' सोचते हैं कि समझ लीजिए कि कुछ चाँदी मिल गई, जो मरी हुई चीज़ थी, उससे कुछ बना दिया तो सोचा कि हमने बड़ा कुछ बना दिया। हम तो मरे से मरा बनाते हैं। लेकिन सारा जीवन्त कार्य जो है परम चैतन्य करता है। और ये जो परम चैतन्य की हमें देन मिली हुई है और उसका जो हमें अनुभव हुआ है वो सारा आत्मसाक्षात्कार से है। क्योंकि परम चैतन्य जो है, वो आदिशक्ति है, जो कि शिव की इच्छा शक्ति है, उसी का प्रकाश है। इस परम चैतन्य के आशीर्वाद से ही आप लोग सारे कर्म करेंगे। जिस दिन ये आपमें घटित हो जाए, आप अद्‌भुत लोग हो सकते हैं।

लेकिन 'मैं यह कर रहा हूँ', यह जब भावना आई, और 'मैंने ये किया' और 'मैं ये करना चाहता हूँ', या कोई जोर जबरदस्ती किसी भी चीज़ की, तो इसका मतलब यह है कि आत्मा का प्रकाश पूरी तरह से आपके अन्दर अभी नहीं आया है। सो पूरा कर्म ही ये परम चैतन्य कर रहा है तो आप अकर्म में आ गये, जब आप कोई कार्य ही नहीं कर रहे, जैसे कि ये बल्ब कहे कि 'मैं बिजली दे रहा हूँ' तो गलत बात है। आपके अन्दर वही परम चैतन्य कार्य कर रहा है, जो लोग आत्मसाक्षात्कारी हैं। जिसने आपको बनाया, आपको घड़ाया।

आपका शरीर, सब चीज़ जो बनी है वो उसी परम चैतन्य की कृपा से बनी है। और उसके बाद आज जो मनुष्य बनके भी, आप जो आत्मसाक्षात्कारी बन गए, वो भी उस परम चैतन्य का ही आशीर्वाद है। तो ऐसे मनुष्य में अहंकार कैसे आ सकता है। जब वो जानता है कि मैं कुछ भी नहीं कर सकता हूँ। जैसे कि एक आर्टिस्ट है और उसके हाथ में कूँचली (ब्रश) है और वह कूँचली जानती है कि मैं कुछ कार्य नहीं करती हूँ, यह तो एक आर्टिस्ट है, जैसे कि मैं आपको कृष्ण की बात बताती हूँ कि कृष्ण की मुरली ने कहा कि, 'मुझे लोग क्यों कहते हैं कि मैं बजती हूँ पर बजाने वाला तो कृष्ण है। मैं तो खोखली हूँ।' सो वो खोखलापन जिसको अहंकाररहित कहते हैं, पूरी तरह जब हमारे अन्दर स्थापित हो जाता है तब हम सोच सकते हैं, कि हमारे अन्दर जो एक विचार था कि, 'हम ये कार्य करते हैं, वो कार्य करते हैं' कितना दु:खदायी था, कितना परेशान करने वाला। क्योंकि मैं यह कार्य कर रहा था और 'मैंने' ये कार्य किया और उस कार्य का कोई 'फल' ही नहीं निकला, इसलिए मैं दु:खी हो जाता हूँ। मैंने यह कार्य किया और इसमें मुझे बड़ा यश मिल गया तो और मेरा दिमाग खराब हो जाता है। किन्तु मैंने यह कार्य नहीं किया, करने वाला परम चैतन्य का सारा कौशल्य है, तो जो हुआ सो ठीक ही है। गर समझ लीजिए हमारा रास्ता कहीं खो गया, हम गलत रास्ते से आ गए। उस समय कोई यह सोच सकता है कि 'मैं गलत रास्ते से आ गया। बड़ी गलती हो गई। मुझे इस रास्ते से नहीं जाना चाहिए था।' लेकिन एक आत्मसाक्षात्कारी सोचता है कि यहाँ से जाना जरुरी होगा इसलिए मैं जा रहा हूँ। तो उसको दु:ख नहीं होने वाला, तकलीफ नहीं होने वाली। वह ये नहीं सोचने वाला कि 'इस रास्ते से क्यों आया, इस रास्ते से न आता तो मेरा ठीक रहता, मैं गलत रास्ते में आ गया।' यह कुछ वह सोचता नहीं। सोचता है, ठीक है। उसके सामने आप हजार विनप कर दीजिए, 'भाई कैसे हैं,' 'ठीक हैं।' उसके सामने कोई चटनी या थोड़ा पापड़ रख दीजिए, 'भाई, कैसा था?' 'बढ़िया था' आप कहेंगे कि कैसा आदमी है ये, उसमें कोई स्वाद नहीं। उसको कुछ भी दो कहता है 'बहुत अच्छा है।' यह है किस तरह का आदमी! फिर आप उसे महलों में रखिए वो राजा जैसा बैठा रहेगा। और आप उसको जंगलों में रखिए तो जंगलों में रह लेगा, उसको आप पेड़ पर बैठा दीजिए, वह बैठा रहेगा। उसको कोई शिकायत होगी कैसे?जब कि वो जानता है कि परम चैतन्य ही मुझे इधर से उधर हटा रहा है। तो फिर शिकायत किससे करें। उसको आप मारिये तो कहेगा-ठीक है और अगर या हार पहनाओ तो कहेगा कि ठीक है, दोनो उनके लिए ठीक है क्योंकि **आत्मा जो है वो किसी चीज़ में चिपकता नहीं।** जब आप किसी चीज़ में चिपक जाते हैं जैसे कि 'मेरी प्रतिष्ठा, मैं बड़ा आदमी, मैं छोटा आदमी, मैं बड़ा प्रतिष्ठित हूँ या मैं ऐसा हूँ' तब आपको लगता है कि इन्होंने मेरे साथ ऐसा क्यों किया। लेकिन असल में जो आदमी बैठ गया, उसको यह महसूस ही नहीं होता, वो अपने आत्मा में ही संतुष्ट रहता है। वह कोई बक-बक नहीं करता। जब बोलना है तब बोलता है, नहीं बोलना है तब नहीं बोलता। किसी ने कुछ कह दिया उसे सुन लेता है, गर कुछ ज्ञान की बात है तो उसे सुन लेता है और अज्ञान की बात है तो उसे भी सुन लेता है। उसे पता होता है कि यह ज्ञान है और ये अज्ञान है। अगर समझ लीजिए आपने पूछ लिया कि 'इस जात के लोग कैसे हैं?' वह कहेगा 'ठीक हैं-इन लोगों में ये गुण है, यह-यह दोष है उनके।' गुण का वर्णन मात्र कर देगा, पर यह नहीं

आत्मा जो है वो किसी चीज़ में चिपकता नहीं।

कहेगा कि मुझे इनसे नफरत है। यह कभी नहीं कहेगा। क्योंकि घृणा करना एक पाप है और इसलिए उससे कोई पाप ही नहीं हो सकता। जो भी वो करेगा वह पुण्य होगा।

समझ लीजिए उसे किसी को मार डालता है, अब देवी है, वो भूतों को मारती है। वो कोई पाप नहीं। वो नहीं मारे तो पाप फैलेगा। तो वो अपने काम से चूकता नहीं। उसे जो करना है वो करता है। क्योंकि परम चैतन्य मार रहा है। मैं कौन मार रहा हूँ? परम चैतन्य गर चाहते हैं कि इसको मार डालूं, तो बस मार डालता है, पर परम चैतन्य कहते हैं कि तुम कार्य करो तो मैं इसे करता हूँ। लेकिन परम चैतन्य की गुहाही देने से पहले उससे वह एककारिता तो स्थापित होनी चाहिए। परम चैतन्य आप ने कह दिया ठीक है, वो आपकी जेब में थोडे ही बैठा हुआ है, अगर आप में यह स्थिति है और आप उस ऊँची दशा में पहुँच गये कि जहाँ पर आपको परम चैतन्य से एकाकरिता प्राप्त होती है तब आप जिस चीज़ को गलत समझते हैं उसके लिए आप कह सकते हैं।

बड़े-बड़े संतों ने इतने लोगों को बताया है कि तू इतना खराब है, तू इतना दुष्ट है, तू ऐसा क्यों करता है, यह है, वह है, सब उसको बता दिया ताकि उसके मुँह पर कोई ड़रे नहीं। क्योंकि वे जानते थे कि यह परम चैतन्य का कार्य है, उसमें उनको डरने का क्या! ज्यादा से ज्याद जेल हो जाएगी। साक्रेटिस को (सत्य) बोलने के लिए जहर दिया गया, तो वो कोई डरा था! उसने कहा जहर या और कुछ पिला दो। उसको कोई भी प्रलोभन दो, कुछ भी करो, वो जिसे सत्य समझता है वो ही बोलेगा। क्योंकि परम चैतन्य सत्य ही बुलवायेगा। जिस वक्त उसे जिसने सत्य बोलना है उससे वो सत्य ही बोलेगा और वो सत्यनिष्ठ होगा। उसकी बुद्धि हर सत्य को एकदम पहचान जाएगी कि कौन सच्चा है, कौन झूठा है, एकदम समझ जाएगी ऐसी उसकी बुद्धि कुशाग्र होगी उसकी बुद्धि को हम सुबुद्धि कह सकते हैं। क्योंकि उस बुद्धि पर आत्मा का प्रकाश आ गया। एक नज़र से वो पहचान सकता है कि कौन कितने गहरे पानी में हैं और फिर उसको परम चैतन्य ही बता देता है कि इस आदमी को कैसे ठिकाने करना है। बहुत से लोग बहुत बार मुझे कहते हैं कि आपको ऐसा नहीं कहना चाहिए था, आपको ऐसा नहीं कहना चाहिए था जब, वे उसका परिणाम देखते हैं तो कहते हैं कि अच्छा हुआ आपने ऐसा कहा। नहीं कहा होता तो ये होता ही नहीं।

सो परम चैतन्य का करना धरना और उसका ही सब कुछ पाना है और उसका भोग भी हम नहीं उठा सकते। उसका भोग भी

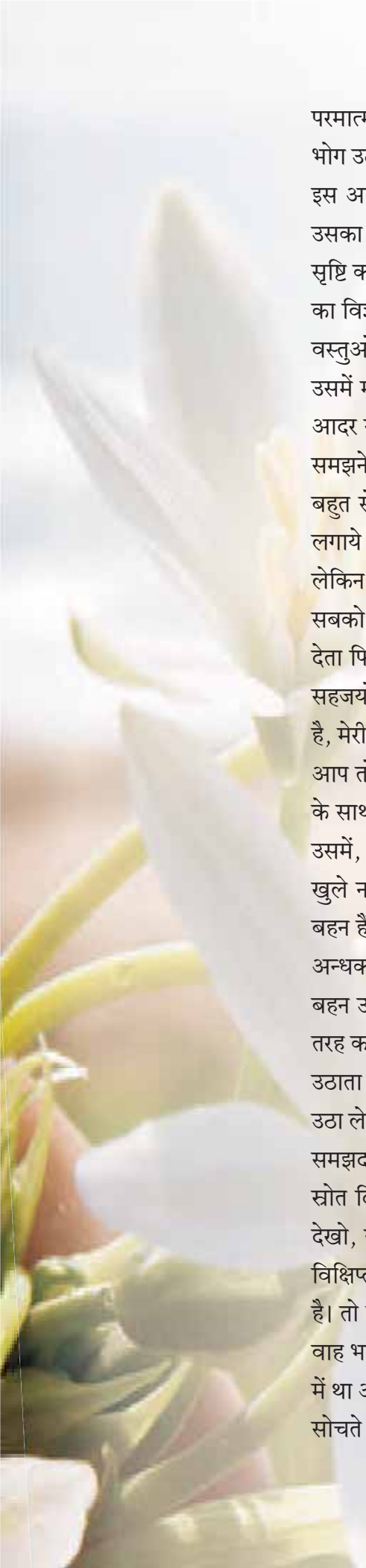

परमात्मा ही उठाते हैं। हम तो सिर्फ उनकी लीला ही देखते रहते हैं और अगर हम किसी चीज़ का भोग उठा ही सकते हैं तो उस आत्मा के लीला का ही भोग उठा सकते हैं। अब अध्यात्म जो है वो इस आत्मा के प्रकाश का, उसके कार्य का, उसके लीला का, सबका एक तरह से विज्ञान है, उसका साइन्स है। अगर जो सच्ची तरह से इस चीज़ को समझ ले, वो समझ सकता है कि सारे सृष्टि का विज्ञान ही आत्मा से आता है और जब तक ये विज्ञान हमारे अन्दर नहीं आएगा तो बाह्य का विज्ञान बिल्कुल ही बेकार है क्योंकि उसमें बहुत ही थोड़ी सी चीज़ है विज्ञान की कि वो जड़ वस्तुओं के बारे में आपको समझा देता है। उसमें सन्तुलन नहीं है, उसमें सामाजिकता नहीं है, उसमें मनुष्यता नहीं है, और उसमें प्रेम नहीं है, उसमें कला नहीं है, उसमें कविता नहीं है, उसमें आदर नहीं है, कुछ भी जो कि मनुष्य वो चीज़ ही नहीं है। एक मशीन जैसी चीज़ है। विज्ञान को समझने के लिए भी मनुष्य को आत्मा का प्रकाश चाहिए। आत्मा के प्रकाश से आप विज्ञान के बहुत से छोर खोल सकते हैं, जो अभी तक नहीं खुले और फिर विज्ञान में जाकर उसका पता लगाये तो समझ सकते हैं। ये और पूछते हैं कि माँ आप कैसे जानते हैं। हम तो नहीं जानते हैं। लेकिन सब जाना ही हुआ है। जिसने सब कुछ जाना हुआ है उसको जरुरी नहीं कि वो सब कुछ सबको बताये। क्योंकि सबको समझना भी तो आना चाहिए उसको। जरुरी नहीं सबको उपदेश देता फिरे, जो जहाँ है वही रहने दीजिए। जिस वक्त मौका आएगा तब उसे समझाना चाहिए। इस सहजयोग में भी बहुत से लोग बड़े कभी-कभी परेशान हो जाते हैं। मेरा बाप है, सहजयोग में नहीं है, मेरी माँ है, वो सहजयोग में नहीं है, मेरा भाई है वो सहजयोग में नहीं है। नहीं है तो जाने दीजिए। आप तो है न। आप अपने साथ रहिए। जितना मनुष्य अपने साथ आनन्द में रहता है उतना किसी के साथ नहीं रहता, क्योंकि सारा कुछ आप ही के अन्दर है। इसलिए ये नहीं है उसमें, वो नहीं है उसमें, इस तरह की बातें सोचना, फिर यही विचार आता है कि अभी पूरे दालान हमारे हृदय के खुले नहीं। इसलिए हम ऐसा सोचते हैं। जो अब आत्मसाक्षात्कारी है यही आपके बाप, भाई, बहन हैं, और इनको तो कोई वो प्रश्न नहीं है। यह प्रश्न उन लोगों को होता है जो अभी भी आधे अन्धकार, आधे प्रकाश में हैं। वो ये सोचते रहते हैं कि, अभी ये मेरा भाई उसमें फंसा हुआ है, मेरी बहन उसमें फंसी हुई है। अपने आप से वो आ जाएंगे किसी से जबरदस्ती नहीं हो सकती। इसी तरह का एक आत्मसाक्षात्कारी सोचता है। वो देखते रहता है, सबको देखते रहता है और आनन्द उठाता है। मनुष्य के पागलपन में भी वो आनन्द उठा लेता है और उसके स्यानेपन में भी वो आनन्द उठा लेता है। कोई अगर बेवकूफी की बात करता है, तो उसका आनन्द भी उठा लेता है। और कोई समझदारी की बात करता है तो उसका भी आनन्द उठा लेता है। सब चीज़ में उसे एक आनन्द का स्रोत दिखाई देता है। कोई मनुष्य अगर विक्षिप्तता से रहता है, तो उसमें भी उसे लगता है कि, देखो, यह कैसा एक नाटक है, जैसे किसी नाटक के बारे में कोई नाटककार लिखता है कि एक विक्षिप्त को दिखा दिया या गुस्सैल आदमी दिखा दिया, बड़ा क्रोधी और उसका मज़ाक बन रहा है। तो जब एक आत्मसाक्षात्कारी, क्रोधी मनुष्य को देखता है तो फौरन उसे क्या लगता है, कि वाह भई वाह क्या क्रोध चढ़ रहा है इस पर। अब तो और भी चढ़ गया। अब तो सिर्फ आज्ञा चक्र में था और अब तो सहस्रार में भी चढ़ गया। अब न जाने क्या-क्या होने वाला है। वह तो यही सब सोचते रहता है। उसको कोई घबराहट नहीं होती। पर वह तो यह सोचता है कि इसके क्रोध का जो

सारी सृष्टि का विज्ञान ही आत्मा से आता है

चला है कहीं ऐसा न हो जाए कि उसका सर फट जाए या कुछ तो फिर कहेगा कि थोड़ा सा ठण्डा होकर ही सोचें। वह कहेगा नहीं रहने दीजिए। मैं समझता हूँ इसे। तो ठीक है, समझिये। मैं भी आपको समझ रहा हूँ। तो वो बैठे-बैठे उसके बाद अगर उससे कहिए कि आप नाटक लीखिए। तो वो इतना सुन्दर नाटक लिख लेगा खुद ही आदमी का कि आप हँस-हँस के लोट-पोट हो जाएंगे।

उसमें जो यह दृष्टि है इसकी, ये किसी में उलझी हुई दृष्टि नहीं है। इसे निरंजन दृष्टि कहें या साक्षी-स्वरूप। साक्षी-स्वरूप दृष्टि में वो सारे समाज का इतना सुन्दर चित्रण कर देता है कि सिवाय हँसी के आपको कुछ भी समझ में नहीं आता कि वाह भाई, क्या ये चित्रण बनाया है। यानी गम्भीर से गम्भीर में भी आप ये समझ सकते हैं कि बहुत सी बातें ऐसी हैं जो कि दिखने को गम्भीर लगती हैं लेकिन उसमें एक तरह का बड़ा छिपा हुआ सन्देश है। हर चीज़ में। यों तो हुआ कि जब युद्ध देखते हैं तो बड़ी उद्विग्नता आ जाती है। लगता है ये क्या हुआ, क्यों मार रहे है बिचारे सीधे-साधे लोगों को क्यों मार रहे हैं। अगर ये जो उद्विग्नता आ जाए हमारे साक्षात्कारियों को तो फौरन उसकी खबर चली जाएगी परम चैतन्य को, और जो आततायी ये काम करेगा उसका ठिकाना हो जाएगा, उसका इलाज हो जाएगा। वो उद्विग्नता भी एक तरह से कार्यान्वित होती है। कोई आह्लाददायी चीज़ है तो वह ठीक ही है। लेकिन कोई ऐसी भी चीज़ हों, जिसको देखकर उद्विग्नता आयें, पर मनुष्य सोचे कि ऐसे कार्य क्यों हो रहे हैं। ऐसे नहीं होने चाहिए, तो फौरन उसका इलाज हो जाएगा। बहुत सी बाते इस तरह होती रहती है। जैसे कि मैं अपने बारे में बता सकती हूँ कि जब मैं रशिया (रूस) में पहली बार गई तो रशिया में ७-८ दिन रहने के बाद फिर घर जाने पर फिर से बात निकली कि फिर से वहाँ योग का एक सेमिनार होने वाला है। तो हमारे घर में ये कहा गया कि अभी-अभी जा कर आए हो, फिर आप दो दिन के लिए जाओगे! क्या फायदा है। जाने दीजिए, लोग हैं सम्भाल लेंगे। तो मैंने कहा, 'नहीं मुझे वहाँ जाना जरुरी है।' तो कहने लगे 'क्यों?' मैंने कहा कि 'जो इस्टर्न ब्लाक है उसे तोड़ना है।' वह कहने लगे 'कैसे टूटेगा?' तो मैंने कहा, 'बस टूटेगा।' क्योंकि वहाँ इस्टर्न ब्लाक के सब लोग वहाँ आएंगे, और उन में से जो लोग पार हो जाएंगे वो जाते ही वहाँ परम चैतन्य अपना काम कर लेगा चाहे एक-एक ही आदमी हो। आश्चर्य की बात यह है कि उस योग सेमिनार में मैं सिर्फ पैतालीस मिनट ही बोली और पन्द्रह मिनट में आत्मसाक्षात्कार दिया और उसके बाद वो जितने भी लोग ये अपने-अपने देश में गए और वहाँ ये कार्य हो गया। सो परम चैतन्य के कार्य के लिए अब जरुरी है कि आत्मसाक्षात्कारी लोग हों, या उनका साधन हो।

परम चैतन्य का कार्य आत्मसाक्षात्कारी लोगों के ही इच्छा के अनुसार होता है। अगर आपकी इच्छा हो तो वो कार्य हो सकता है। पर आपकी इच्छा में भी शुद्धता होनी चाहिए। ऐसी इच्छा नहीं जिसमें आप स्वार्थी हों, या ऐसी इच्छा नहीं जिसमें आप अपने ही बारे में सोचते हैं, क्योंकि ये कार्य आत्मा के ही बल पर होता है और आत्मा जो अपना शिव है जैसा मैंने बताया वो बिल्कुल स्वच्छन्द, निस्पृह, निराकार, निरन्तर और नित्य इस तरह की प्रकृति का है । इसलिए जो मनुष्य आत्मसाक्षात्कारी हो जाता है, उसमें ये सारे ही गुण आ जाएंगे। ये गुण अगर आपके अन्दर नहीं आए जैसे आपसे मैंने कहा कि, बाह्य से आप में सारे आवरण हों, आप राजा हो, आप चाहे कुछ भी हो, अन्दर से आप निस्पृह हैं, अन्दर से आप छूटे हुए हैं, आप किसी चीज़ से चिपकते नहीं, अन्दर से आप किसी से द्वेष नहीं करते, किसी का भक्षण नहीं करते, किसी के लिए आपको लालसा नहीं होती; ये सारे षडरिपु अपने आप छूट जाते हैं।

तो आत्मा का सबसे बड़ा प्रकाश यही है कि आपको कोई प्रयत्न नहीं करना है। वे कहते हैं, 'मन को वश में रखो' पर किसी को वश में रखने की जरुरत नहीं। जैसे ही आप आत्मसाक्षात्कार में उतरते जाते हैं, उस प्रकाश में अपने आप अन्धता दूर होती जाती है और ये बड़ा भारी लाभ है, जिसने इस लाभ को अभी तक प्राप्त नहीं किया, उसे ये सोचना चाहिए कि अभी हमारा आत्मसाक्षात्कार पूरी तरह से फलित नहीं हुआ। अगर हमारा आत्मसाक्षात्कार पूरी तरह से फलित हुआ है तो हमारे जीवन में, हमारे आस-पास के समाज में, हमारे सहजयोग के समाज में, हर जगह, एक नवीन तरह का मनुष्य तैयार होना चाहिए, जो आत्मा स्वरूप है, जो आत्मा के प्रकाश से प्लावित है। जिसमें शिव का दर्शन होता है। अब शिवजी को देखा है आपने, कि जब उनका विवाह हुआ तो उनकी जो पत्नी थी, वो तो बहन थी विष्णूजी की और विष्णू जो थे वे कुबेर थे, उनकी बहन से शादी हो रही थी और ये अपने नन्दी पर बैठ करके, उसमें न लगाम था न कुछ दोनों पैर लगा कर नन्दी पर बैठ गये और नन्दी कूदता हुआ चला आ रहा था और वे नंग-धड़ंग उस पर बैठे हुए हैं। यह सब अभिव्यक्ति है कि उनको किसी चीज़ की लगन नहीं थी, उनको किसी चीज़ का ये विचार नहीं कि मुझे ये चाहिए, नहीं तो कोई सोचेगा कि भाई, मैं कुबेर की बहन से शादी कर रहा हूँ, कौन से कपड़े पहनूं? कौनसे रथ से जाऊँ? दस दिन पहले इनके कपड़े बनेंगे, उसके जूते बनेंगे, उसका सारा अवतार बनेगा, तब वह पहुँचेगा। पर शिवजी ने सोचा कि मेरा तो विवाह हो रहा है, इससे ज्यादा कोई बात मुझे मालुम नहीं। उन्होंने कोई विचार नहीं किया। और उनके साथी जो थे, वह भी उन्ही जैसे , किसी के एकाक्ष थे, किसी के हाथ पैर गले हुए, सबको एक साथ लेकर, कोई बात नहीं। इसका प्रतीक रूप से ये अर्थ होता है कि आपके पास शारीरिक कोई भी व्यंग हो, या कोई भी चीज़ हो जब तक आत्मा का प्रकाश आपके अन्दर है कोई सी भी आपकी शक्ल हो, कोई सा भी आपका रूप हो, तो शिव आपको मानते हैं और शिव अपनी बरात में आपको ले जाएंगे। वहाँ सब लोग हैरान हैं कि ये दूल्हा मियाँ कैसे चले आ रहे हैं, नन्दी पर बैठ कर के, दोनों तरफ दोनो पैर करके, पर ये तो स्वच्छन्द है, इनको कोई परवाह नहीं। निस्पृह है। बाते हुई होगी वहाँ पर कि ये कैसा दूल्हा चला आ रहा। तो पार्वती जी को अच्छा नहीं लगा क्योंकि वे जानती थी कि मेरा पति जो है, वो आत्मस्वरूप है। इसलिए उन्हें नि:संग कहते हैं।

इसमें हमारे दो अंग दिखाई देते हैं। एक तो हमारा अंग कि जो आज हम विष्णु स्वरूप हैं जो बाह्य में है और अन्दर का अंग जो है वो हमारे शिव है और उस शिव के जैसे हमें निस्पृह, स्वच्छंद और निरासक्त होना चाहिए। किसी चीज़ की आसक्ति हमारे अन्दर नहीं आ सकती, अगर हम आत्मा स्वरूप हैं। फिर बाह्य में आप श्रीकृष्ण हो जाएं या आप और कोई हो जाएं लेकिन अन्दर का जो शिव है वो अपनी जगह स्थिर रहेगा। बाह्य का अंग जो है वो महत्वपूर्ण अब नहीं रहा जब कि आप आत्मा स्वरूप हो गए। और जब आत्मा स्वरूप हो गये तो इन सब चीज़ों के लिए आपकी जो भावनाएं हैं, वो एक दम बदल जाएंगी। श्री एकनाथ जी का सुन्दर उदाहरण है कि वह कावड़ ले कर पहुँचे थे द्वारिका, वहाँ चढ़ाने और ऊपर चढ़के उनको जाने का था। ये अब भक्ति का माहौल उनका था। सब लोग गये कावड़ में पानी भर कर। लेकिन उस वक्त उन्होंने देखा कि एक गधा प्यास से मरा जा रहा था। उन्होंने उसको पानी पिला दिया। लोगों ने कहा क्या करते हो? वहाँ से आप कावड़ भरके आप इतनी दूर पैदल चल के, पानी भर के आए और इस गधे को पानी पिला दिया। तो उन्होंने कहा कि 'तुमको नहीं मालुम, मेरा श्रीकृष्ण यहाँ तक उतर के आया पानी पीने।'

ये जो भक्ति का सूक्ष्म भाव है, वो एक आत्मसाक्षात्कारी ही समझ सकता है, कि बाह्य को देखना कि हम कावड ले कर गए और 'हमने' जाकर के उनको समर्पित किया। हम कौन होते हैं? जब वही भाव हट गया, 'हम' ही भाव नहीं रहा और वहाँ पर एक बिचारा प्यासा प्राणी पड़ा हुआ था उसको आपने पानी पिला दिया, ठीक है परम चैतन्य ने ये कार्य कर दिया। हमसे क्या मतलब। इसलिए बहुत सी बातें जो संतों की हम समझ नहीं पाते हैं, वो अब समझ पाइयेगा क्योंकि अब आपने आत्मसाक्षात्कार पाया है और आपसे भी ऐसे कार्य हो जाएंगे और जो नासमझी हमारे अन्दर रही संन्तो के कारण कि उनका जीवन विक्षिप्त जो हमें लगता था, क्योंकि हम स्वयं विक्षिप्त हैं। जब पागलखाने में जाइये तो अच्छा भला आदमी भी पागल लगने लग जाता है। उसी तरह इस पागल दुनिया में वो आये और ये समझाने की कोशिश की, पर किसी ने समझा नहीं उन्हें और उनको तकलीफ दी और परेशान कर दिया क्योंकि वे आत्मस्वरूप थे, वे शिव में स्थित थे, वो शिव स्वरूप थे। शिव स्वरूप आदमी बाह्य में कैसा भी रहे, उसकी शिव स्थिति बाह्य में भी प्रकाशित रहती है, निखरती रहती है। सबसे बड़ी चीज़ है औदार्य (उदारता)। औदार्य चीज़ जो है, वह शिव शक्ति है। इतना उदार हृदय वो है कि उन्होंने राक्षसों को तक वरदान दिया। क्यों? 'क्योंकि देता हूँ मैं वरदान।' अब मेरे पास भी कुछ लोग आते हैं कि माँ हमें वरदान दो। मैं जानती हूँ ये लोग बड़े खराब हैं। 'चलो तुमको वरदान चाहिए, लो।' परम चैतन्य देख लेगा इनको, मुझे क्या करने का है। राक्षसों को भी वरदान दिया। चलो, तुम्हे चाहिए, लो। क्या चाहिए ले जाओ। एकदम औदार्य। इसको कहना चाहिए कि एक अन्धा औदार्य, आप कह सकते हैं। यह अन्धा नहीं है क्योंकि पूर्ण विश्वास है कि परम चैतन्य वहाँ बैठा हुआ है, मेरी शक्ति है, मेरे सारे कार्य को कर रही है । मैं तो यों ही कहने के लिए, 'ले जाओ।' यहाँ से ले जाते ही रास्ते में विष्णूजी ने उसका हाल खराब कर दिया। जो सब चीज़ को जानते हैं, उनके लिए यह प्रश्न नहीं रहता कि इनका क्या होगा, क्या नहीं होगा। वह सब जानते हैं। उसी प्रकार जो शिव में स्थित है, वह अपने में बड़ा समादानी होता है और वह सब कुछ जानता है, सब कुछ समझता है, पर वह कहेगा नहीं। लेकिन वह सब कुछ जानता है। और सबसे बड़ी शिव की शक्ति है प्रेम, निर्वाज्य प्रेम-जिसमें कि कोई ब्याज नहीं देना, ब्याज तक नहीं देना है, निर्वाज्य। उनकी करुणा की शक्ति इतनी जबरदस्त है कि उस करुणा को देखकर के आप भी अचम्भे में पड़ जाएंगे।

मुझे बहुत लोग कहते हैं कि, माँ तुमने इस आदमी की क्यों मदद करी, यह तो बहुत खराब आदमी है। उसने ये किया, वो किया। भाई अब क्या करें, वो आया, ठीक है, हो गया। चलो जाने दो। जो हो गया, हो गया, चलो जाने दो। कर दिया, इसमें क्या करना। अब वह करुणा ही है, क्या किया जाए। कोई रोक सकता है? जब सारा शरीर ही करुणा से भर जाए तो कोई भी मनुष्य पास में आ जाए तो वह करुणा का कार्य करेगा ही। ये शरीर छोड़ेगा ही नहीं। उसे क्या करें! इसी तरह एक आत्मसाक्षात्कारी मनुष्य का करुणा का भाव बढ़ता है और उसकी जो नशा चढ़ती है वो ऐसी नशा है कि अकेले मजा नहीं आता। आप आत्मसाक्षात्कारी हो गये तो चुप नहीं बैठने वाले कुछ भी करो। कहेंगे कि चलो, मैं हो गया, दस आदमी और इसे पिये तो मजा आएगा। देखेंगे, चलो भाई, उसको भी करो, इधर से उधर दौड़ेगा। जाएगा सबसे कहेगा, देखो, आत्मसाक्षात्कार कितनी महत्वपूर्ण चीज़ है। इसमें उसको तकलीफें होंगी ही। लोग उसे

सतायेंगे, बुरा कहेंगे। उस पर कोई असर नहीं आने वाला है क्योंकि वह परम चैतन्य का एक, जैसा मैंने कहा, कलाकार के हाथ में कूंचली (ब्रश) है, वैसे कूंचली है। उसको इसकी परवाह नहीं। वह तो कलाकार जाने, मुझे क्या? मैं तो बीच में बैठा हुआ देख रहा हूँ कि कोई चित्र बना रहा है। उसी प्रकार उसकी प्रवृत्ति ही इतनी अनासक्त होती है कि वो अत्यन्त शक्तिशाली हो जाता है। उसका भय, या आशंकाएं सब खत्म हो जाती है और बहुत ही सुन्दर कार्य को बड़े खूबी से कर लेता है। और लोग आश्चर्य करते हैं कि यह कैसे कर लिया। कोई चीज़ समझाता भी इतनी सुन्दरता से है कि मनुष्य का अगर अहंकार है तो उससे जा के नहीं कहेगा कि तू बड़ा अहंकारी है, कभी नहीं कहेगा। ये कभी आत्मसाक्षात्कारी नहीं कहेगा। यह नहीं, जैसे कुछ सहजयोगी कहते हैं कि तुम्हे भूत लग गया, ऐसा कभी नहीं कहना चाहिए। उसका तरीका भी, एक श्री रामदास स्वामी का बताती हूँ आपको।

एक बार शिवाजी को थोड़ा अहंकार हो गया क्योंकि किला बन रहा था। उसमें हजारों लोग काम कर रहे थे। उनको थोड़ा अहंकार हो गया कि देखो, मैं कितने लोगों को पालपोस रहा हूँ। तब रामदास स्वामी वहाँ पहुँचे, वो तो हर जगह पहुँच जाते थे। उन्होंने देखा कि इनको अहंकार हो गया है। कुछ कहा नहीं उन्होंने। वहाँ एक बड़ा सा पत्थर पड़ा था। कहने लगे जरा इसे धीरे-धीरे तोड़ दो। पत्थर को तोड़ते-तोड़ते एक छोटे से नारियल के जैसे पत्थर पर आ पहुँचे। तो उस पत्थर को हाथ में लिया और एक हाथ से खटाक से मारा तो देखा क्या कि उसके अन्दर में पानी है और पानी के अन्दर मेंढ़क बैठा है। शिवाजी ने एकदम उनके चरण पकड़ लिए कि जिसने आपको जीव दिया है वह पानी भी देता है, मैं कौन होता हूँ देने वाला। यह अहंकार किस तरह से तोड़ा जाए। आपको आश्चर्य होगा कि साइन्स भी कहता है कि मेंढ़क जो है वो बगैर हवा के,अगर उसके पास पानी हो, तो रह सकता है।

तो आपको अगर किसी का अहंकार भी तोड़ना है तो उससे कहने की जरूरत नहीं कि तु बड़ा अहंकारी है। आप सिर्फ सोच ही लीजिए कि वो अहंकारी है तो, परम चैतन्य उसकी व्यवस्था कर देगा और उसका अहंकार टूट ही जाएगा। पर सबसे पहले एक आत्मसाक्ष मनुष्य को यही सोचना चाहिए कि मैं अब शिव में शरणागत हूँ, मेरी आत्मा में मैं शरणागत हूँ और मेरी आत्मा के ही कारण ये परम चैतन्य सारा कार्य करने वाला है और इसलिए मुझे कोई किसी चीज़ की चिन्ता नहीं। मेरा कौन बैरी है! कौन मुझे मार सकता है? मैं तो परम में जी रहा हूँ। सारा कार्य जब यही कर रहा है, तो मैं कौनसा कार्य कर रहा हूँ? इस तरह की जब भावना हो जाए तब कहना चाहिए कि हमारे अन्दर के शिव को हमने पहचाना है। हम बाह्य के अपने शरीर वगैरेह सबको खूब समजते हैं प्रतिष्ठा को समझते हैं, पर इस शिव को पहचानना चाहिए जो हमारे अन्दर है, जो हमारे अन्तरतम में है। जो हमारी ही सारी शक्ति का आधार, जिसे कि हम सच्चिदानंद कहते हैं, उस शिव को ही हमें मानना चाहिए।

आप सबको अनन्त आशीर्वाद!

NITL
सहज साहित्य
नोंदणी मार्गदर्शिका

आप अपने सहज साहित्य को उदा.किताबे, ऑडिओ, विडीओ कैसेट और सीडीज (प्रवचन और संगीत), मैगज़िन्स, पेंडंट इ.नीचे दिये हुए किसी भी तरिके से मंगवा सकते हैं।

☞ एनआयटीएल प्रतिनिधी :

आप सहज साहित्य को एनआयटीएल के अधिकृत प्रतिनिधिओं से खरीद सकते हैं।

☞ एनआयटीएल वेबसाइट - ऑनलाइन बुकिंग :

आप हमारी वेबसाइट www.nitl.co.in पर ऑन-लाइन रजिस्ट्रेशन कर के भी ऑर्डर दे सकते हैं। (जानकारी के लिए शॉपिंग डेमो पर देखें)

☞ टेलिफोन/फैक्स/इ-मेल :

आप अपना ऑर्डर एनआयटीएल तक निचे दिये हुए फोन नं., फैक्स, इ-मेल द्वारा पहुँचा सकते हैं।

टेलिफोन	:	+91-20-25286032, 25286537
मोबाईल नं.	:	9763741027, 9767583808
फैक्स	:	+91-20-25286722
इ-मेल	:	sale@nitl.co.in

☞ पैसे कैसे अदा करें?

- वेबसाइट पर ऑर्डर करने के लिए आप अपनी रकम क्रेडिट कार्ड द्वारा ऑन-लाइन भर सकते हैं या चेक/डी.डी./कॅश द्वारा एनआयटीएल के एक्सिस बँक के सेविंग अकौंट नं.१०४०१०१००१८५५५४ पर एक्सिस बैंक के किसी भी ब्रैंच द्वारा **'निर्मल ट्रैन्सफोर्मेशन प्रा.लि.'** इस नाम से भेज सकते हैं। (Payable at Pune)
- रकम प्राप्त होने के बाद आपके द्वारा आदेश (ऑर्डर) की गयी चीज़ें सीधे आपके पते पर भेज दी जाएगी।

एनआयटीएल टीम

संस्कृत में एक बड़ा ही सुन्दर विचार है, 'हंस श्वेतः, बकः श्वेतः, को भेदो हंस बकायो हो। निर-क्षीर विवेक ए तू। हंसः हंसाक्ष, बकः बकः।' मतलब 'हंस और सारस (बकः) दोनो भी सफेद रंग के होते हैं। इन दोनो में क्या अन्तर है? अगर आप पानी और दूध को मिलायेंगे, तो हंस उसमें से सिर्फ दूध पियेगा। पानी और दूध में जो अन्तर है उसे जानने की विवेकता हंस में होती है, जब की सारस में ये विवेकता नहीं होती है। ये एक बहुत ही महत्वपूर्ण चीज़ है जिसे सहजयोगियों ने समझनी चाहिए।

श्री माताजी निर्मलादेवी, १९८८-०७-१०